# माण्डू



भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण

# माण्डू

लेखक

दे. रा. पाटिल

अनुवादक

श्रीमती रवीन्द्र नारंग

प्रत्नकीर्तिमपावृणु

प्रकाशक

महानिदेशक, भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण

नई दिल्ली

2006

प्रथम संस्करण-1982
संशोधन संस्करण-2006



मूल्य : 20.00

मुद्रक : गोवर्सन्स पब्लिशर्स, प्रा. लिमिटेड, नई दिल्ली ।

# विषय-सूची

# चित्र-सूची

फलक

# माण्डू

## १. सामान्य परिचय

माण्डू का पहाड़ी दुर्ग (उत्तरी अक्षांश 22° 2' और पूर्वी देशान्तर 75° 26') धार से लगभग 35 किलोमीटर दक्षिण की ओर स्थित है जो मध्यप्रदेश में, इसी नाम के ही एक ज़िले का मुख्यालय है । यह पहाड़ी समुद्र-तल से 633.7 मीटर ऊँची है तथा पश्चिम, उत्तर और पूर्व की तरफ से काकरा कोह नामक एक गहरी तंग घाटी द्वारा घिरी होने के कारण मालवा के मुख्य पठार से अलग हो गई है । काकरा कोह की तंग-घाटी अन्तत:, दक्षिण में निमाड़ के मैदानों में विलीन हो जाती है । पश्चिम की ओर निकले हुए, विशिष्ट रूप से ऊँचे, सोनगढ़ के पर्वत-स्कन्ध तथा पूर्व की तरफ पहाड़ी के ठीक मध्य भाग को भेदती हुई तंग-घाटी की संकीर्ण परन्तु गहरी खाई के कारण यह पहाड़ी आकार में विषम हो गई है । इसकी लम्बाई, पूर्व से पश्चिम की ओर, लगभग 6 से 8 किलोमीटर है जबकि इसकी चौड़ाई, उत्तर से दक्षिण की ओर, 5 से 6 किलोमीटर है ।

यह उपगिरि शृंखला बहुत आकर्षक प्राकृतिक दृश्यों से सम्पन्न है । वर्षा ऋतु में यहाँ का दृश्य अत्युत्तम होता है जब हर तरफ हरियाली ही हरियाली छाई होती है और इस हरियाली के बीच अनेक निर्झर एवं प्रचण्ड धारायें वेगपूर्वक नीचे की ओर बहती हुई तंग घाटी में इसके निचले पार्श्वों के साथ-साथ घूमती चली जाती हैं । मानसून के समय यहाँ बहुत सुन्दर तथा प्रचुर मात्रा में पेड़-पौधे उग आते हैं और पहाड़ी के शिखर पर बने लगभग एक दर्जन तालाबों और झीलों के कारण इसके सौन्दर्य में चार चाँद लग जाते हैं । अत: इस पहाड़ी को मालवा का "सौन्दर्य-स्थल" कहने में कोई अत्युक्ति न होगी संभवत: दुर्ग-प्राचीरों में परिबद्ध इस नगर को सुल्तानों द्वारा इसके पूर्णोत्कर्ष के समय शादीयाबाद अर्थात् 'हर्ष-नगर' नाम दिये जाने के कारण इसका अतीव सौन्दर्य ही रहा होगा । वस्तुत: जहाँगीर जैसे सुरुचिसम्पन्न सम्राट के लिए

अन्यत्र कहीं भी कोई ऐसा स्थल नहीं था जो वर्षा ऋतु में माण्डू की तरह इतनी सुहावनी जलवायु तथा इतने मनोहर दृश्य से सम्पन्न हो ।

माण्डू के लिए महू और इंदौर बहुत सुविधाजनक रेलवे स्टेशन हैं । इन रेलवे स्टेशनों से माण्डू तक अच्छी, पक्की सड़कें बनी हुई हैं, जो कि धार से होकर निकलती हैं । माण्डू, महू से 92 किलोमीटर तथा इंदौर से 98 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है । इन स्थानों से माण्डू तक नियमित बस-सेवा का प्रबन्ध है । इंदौर से तो टैक्सियाँ भी मिल जाती हैं । यदि पर्यटक माण्डू में रूकना चाहें तो वे पूर्व सूचना देकर, पर्यटक बंगले अथवा सार्वजनिक निर्माण-विभाग द्वारा संचालित विश्राम गृह तथा विश्रान्ति गृह में ठहर सकते हैं । इनमें स्थान के आरक्षण हेतु क्रमशः प्रबन्धक, पर्यटक बंगला, डाक-घर माण्डू, ज़िला धार (मध्य प्रदेश) या कार्यकारी अभियन्ता, सार्वजनिक निर्माण-विभाग, धार (मध्य प्रदेश) तथा सचिव, ग्राम पंचायत, डाक-घर माण्डू, ज़िला धार, मध्य प्रदेश से संपर्क कर सकते हैं ।

यहाँ एक पर्यटक निवास और विश्राम गृह भी है जिसमें स्थान के आरक्षण के लिये क्रमशः प्रबन्धक, पर्यटक निवास, भारतीय पर्यटक विकास निगम, माण्डू एवं अधीक्षक पुरातत्वविद्, भोपाल मण्डल, भोपाल से सम्पर्क किया जा सकता है ।

यहाँ के स्मारकों के फोटो (छायाचित्र) नगद भुगतान करने पर या तो महानिदेशक, भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, जनपथ, नई दिल्ली-110011 अथवा अधीक्षक पुरातत्वविद्, भारतीय पुरातत्त सर्वेक्षण, भोपाल मण्डल, भोपाल, मध्य-प्रदेश के यहाँ प्राप्य हैं । ये स्मारक प्रतिदिन सूर्योदय से सूर्यास्त तक सामान्य जनता के लिए खुले रहते हैं । माण्डू में नियुक्त भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण का स्थानीय प्रतिनिधि संरक्षण सहायक है ।

# २. प्रस्तावना

## इतिहास

### प्रारम्भिक युग (१३०५ ई. तक)

मोहक प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर इस स्थल में छठी शताब्दी ई. के प्रारम्भ में तात्कालिक राजनीतिक सत्ता ने एक प्रकार की किलेबन्दी करके सर्वप्रथम यहाँ के इतिहास की नींव डाली। ज़िला धार में, कुक्षी के समीप तलनपुर में पाई गई आदिनाथ की जैन-प्रतिमा की पीठिका पर अंकित विक्रम संवत् 612 (555 ई.) के संस्कृत अभिलेख के अनुसार उक्त प्रतिमा मण्डप-दुर्ग में स्थित तारापुर नामक स्थान में बने पार्श्वनाथ के मन्दिर में चन्द्र सिंह शा[1] नामक किसी सौदागर द्वारा प्रतिस्थापित की गई थी। विख्यात मुस्लिम इतिहासकार फरिश्ता ने एक दन्तकथा उद्धृत की है, जिसके अनुसार इस दुर्ग का निर्माण खुसरो परवीज़ के काल (590-628 ई.) में किसी आनन्द देव वैस राजपूत ने करवाया था। परन्तु अब तक ज्ञात उस समय की ऐतिहासिक विभूतियों में यह नाम कहीं नहीं मिलता। तथापि उपर्युक्त अभिलेख के अनुसार छठी शताब्दी के मध्य में मण्डप-दुर्ग के नाम से इस पहाड़ी दुर्ग के अस्तित्व के

[1] विक्रम-स्मृति-ग्रन्थ पृ. 598. स्मरण रहे कि अब तारापुर, पहाड़ी के शिखर पर दक्षिण पश्चिम की ओर स्थित एक गांव का नाम है। अबुल-फज़ल ने अपने समय में प्रचलित एक पूर्णतया काल्पनिक दन्तकथा उद्धृत की है जिसके अनुसार इस दुर्ग का नाम मण्डन नामक एक सुनार के नाम पर पड़ा जिसने सोना बनाने वाले पारस-पत्थर की खोज की और यह पत्थर सत्तारूढ़ सुल्तान को सौंप दिया। सुल्तान ने उक्त किला बनवाया जिसका नाम सुनार के नाम पर रखा।

सम्बन्ध में किसी प्रकार का कोई सन्देह बाकी नहीं रह जाता । इस दुर्ग का निर्माण 555 ई. से पहले ही किसी समय हुआ होगा । संस्कृत मण्डप-दुर्ग की व्युत्पति के सम्बन्ध में इस समय कोई सूत्र प्राप्त नहीं है । प्राकृत अथवा क्षेत्रीय भाषा में इस शब्द का पर्याय माण्डव है और इस क्षेत्र में अब भी यह माण्डव नाम से ही प्रसिद्ध है । यह शब्द कालान्तर में और विकृत हुआ जिसका वर्तमान रूप है, 'माण्डू' । मध्ययुगीन फारसी इतिहास में भी माण्डव का इसी नाम से उल्लेख हुआ है ।

इसके बाद की तीन शताब्दियों तक इस किले का कहीं कोई उल्लेख नहीं मिलता । ऐसा प्रतीत होता है कि दसवीं शताब्दी में यह दुर्ग कन्नौज के गुर्जर प्रतिहार साम्राज्य का, संभवतः एक सीमा चौकी के रूप में, भाग बन गया था । राजस्थान में स्थित प्रतापगढ़ में पाए गए विक्रम संवत् 1003 (946 ई.) के एक अभिलेख में इसी वंश के सम्राट् महेन्द्रपाल के शासन के सम्बन्ध में उल्लेख हुआ है । इस अभिलेख के अनुसार उस समय उज्जैन में राजकुमार माधव एक महत्वपूर्ण सामन्त अथवा "महत्वपूर्ण राज्यपाल" के रूप में कार्य कर रहा था और उसका प्रधान सेनापति (बलाधिकृत) श्री शर्मन मण्डपिका अर्थात् माण्डू का शासन कार्य चला रहा था । संभव है उसी समय यहाँ की किलेबन्दी को और सुदृढ़ किया गया हो क्योंकि उस समय हर क्षण दक्कन के शक्तिशाली शासकों द्वारा आक्रमण का भय बना रहता था । किले में दिलावर खाँ की मस्जिद से मलबा हटाते हुए इस समय का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है ।

मालवा में दसवीं शताब्दी के अन्त में परमार वंश सत्तारूढ़ हुआ । परमार शासकों ने मालवा को एक स्वतन्त्र राज्य की हैसियत प्रदान

की । उन्होंने पहले तो उज्जैन को परन्तु बाद में माण्डू से 35 किलोमीटर उत्तर की ओर स्थित धार को अपनी राजधानी बनाया । परमार शासकों विशेषकर राजा मुञ्ज तथा राजा भोज के शासनकाल में मालवा समस्त उत्तरी भारत में शक्ति तथा गौरव की दृष्टि से चर्मोत्कर्ष पर पहुँच गया । माण्डू के शाही अन्त:क्षेत्र में बना 'मुञ्ज-तालाब' आज भी मुञ्ज की याद दिलाता है । मालवा महमूद गज़नी के आक्रमणों का शिकार नहीं हुआ था । यह बात सर्वदा स्मरण रखी जाएगी कि गुजरात में सोमनाथ के विरुद्ध, अपने अन्तिम अभियान के दौरान इस आक्रमणकारी को गज़नी लौटते हुए, एक निर्जन मार्ग से होकर जाना पड़ा, संभवत:, परमार राजा भोज के नेतृत्व में तैनात, बहुत बड़ी तथा युद्ध के लिए पूरी तरह से तैयार सेना उसका पहले वाला मार्ग रोके हुए थी । उत्तर में अभागे हिन्दू शासकों के कटु-अनुभवों को ध्यान में रखते हुए राजा-भोज ने युद्ध के हर संभव दुष्परिणामों का सामना करने के लिए अपने आप को हर तरह से तैयार किया होगा और इसी कारण से माण्डू में रक्षात्मक प्रबन्धों को और अधिक सुदृढ़ किया गया होगा । माण्डू में राजा भोज की इष्टदेवी 'सरस्वती' अथवा 'वाग्देवी' की एक प्रतिमा पाई गई जिस पर प्राकृत भाषा में देवी का एक मंत्र लिखा हुआ है जिसके आधार पर इसे राजा भोज के शासन-काल का मानना ही उपयुक्त होगा ।

किले के स्थानीय संग्रहालय में, सर्प-बन्ध पर अंकित एक अभिलेख में विक्रम संवत् 1125 (1068 ई.) तिथि है । इस अभिलेख में श्री भट्टारक देवेंद्र देव का उल्लेख है जो संभवत: परमार राजा उदयादित्य के अधीन करद सामन्त था । रासमाला के अनुसार माण्डू के सामन्त राजा उदयादित्य के करद थे । उदयादित्य ने धार को ही अपनी राजधानी बनाए रखा । संभव है, लोहानी गुफाओं का उत्खनन तथा उनके

आस-पास और पहाड़ी के अन्य भागों में कुछ शैव-मन्दिरों का निर्माण इसी समय किया गया हो । यह मानना तर्कसंगत है कि उदयादित्य के निर्बल उत्तराधिकारियों ने सैनिक दृष्टि से कम सुरक्षित धार के स्थान पर माण्डू को ही बहुधा अपनी अस्थायी राजधानी बनाया । कालक्रम में माण्डू ही अन्तत: राज्य की स्थायी राजधानी बन गया । किले में स्थित भवनों के मलबे में से प्राप्त विस्तृत अभिलेखों में भगवान विष्णु के प्रति, बिल्हण द्वारा रचित एक लम्बा अभिलेख है । परमार-सम्राट विंध्यवर्मन ने बारहवीं शताब्दी के अन्त में मालवा पर शासन किया । अभिलेखानुसार बिल्हण, विंध्यवर्मन का युद्ध एवं शान्ति-मंत्री था । राजा अर्जुनवर्मन (1210-1218 ई.) के राजदरबार के चाहमान सामन्त सलक्षण ने किले में लोहानी गुफाओं के समीप कुछ मन्दिरों का निर्माण करवाया । अर्जुनवर्मन द्वारा मण्डप दुर्ग से जारी किये गए राजकीय मुहर लगे कुछ दान-पत्र भी उपलब्ध हुए हैं । 1227 ई. के लगभग शम्स्सुद्दीन अल्तमश ने मालवा पर आक्रमण करके भिल्सा (विदिशा) तथा उज्जैन को लूटा परन्तु माण्डू के शासनारूढ़ राजा देवपाल ने उसके साथ सन्धि कर ली जिसके परिणाम स्वरूप मालवा अनाक्रान्त रहा । मुसलमानों का यह प्रथम आक्रमण परमार शासकों के लिए अस्थायी राजनीतिक संकट सिद्ध हुआ । वे दुर्बल तथा छिन्न-भिन्न अवस्था में माण्डू में शासन करते रहे । ज़िला निमाड़ में स्थित गोदरपुर में पाये गए जयवर्मन के ताम्र-पत्रों के अनुसार 1256 से 1261 ई. तक माण्डू में जयवर्मन का शासन रहा । जयसिंह द्वितीय जयवर्मन का उत्तराधिकारी बना । ज़िला धार में वलिपुर के स्मारक स्तम्भ में जयसिंह द्वितीय का उल्लेख मण्डप-दुर्ग के अधिपति के रूप में हुआ है । 1269 ई. में चाहमान नरेश जैत्रसिंह ने जयसिंह को युद्ध में परास्त कर उसका वध कर दिया । 1283 ई. के लगभग भोज

द्वितीय मालवा में सिंहासनारूढ़ हुआ । रेवा-कुण्ड क्षेत्र में सात पंक्तियों का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है जिसमें उसका नाम उल्लिखित है । 1293 ई. में इस अभागे राजा को दिल्ली के सुल्तान जलालुद्दीन खिलजी का सामना करना पड़ा । जलालुद्दीन ने उसके राज्य पर आक्रमण कर माण्डू के आसपास के देहाती क्षेत्रों को विध्वंस किया तथा बहुत-सा लूट का माल लेकर दिल्ली लौटा, फिर भी यह दुर्ग 1305 ई. तक हिन्दू शासकों के अधीन रहा । 1305 ई. में माण्डू-दुर्ग पर अन्तिम चढ़ाई हुई । उस समय महलक देव राज्य की डांवाडोल बागडोर संभाले हुए था । कहा जाता है कि अलाउद्दीन खिलजी ने पुराने कब्रिस्तान को काफिरों से मुक्त कराने अर्थात् वहाँ से उन्हें भगाने के लिए अपने विश्वसनीय सेनापति अइन-उल-मुल्क को विशेष रूप से भेजा । हिन्दू सेनापति कोकदेव अथवा गोगदेव ने आक्रमणकारी शक्तियों का मुकाबला किया परन्तु युद्ध में मारा गया । माण्डू में एक छोटा सा अभिलेख प्राप्त हुआ है, जिसमें कोक का उल्लेख है । संभवत: कोक ने लोहानी गुफाओं के समीप मन्दिर बनवाया था । राजा अविलम्ब माण्डू-दुर्ग की रक्षा हेतु दौड़ा और शीघ्र ही उसने अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त की । अइन-उल-मुल्क किसी गुप्तचर की सहायता से एक गुप्त मार्ग से दुर्ग तक पहुँच गया और अचानक महलक देव पर आक्रमण करके उसकी हत्या कर दी । इसके साथ ही यहाँ हिन्दू-शासन का अन्त हुआ और मालवा मुस्लिम राज्यपालों के आधिपत्य में दिल्ली सल्तनत का ही एक भाग बना दिया गया ।

## मध्य-युग और तत्पश्चात्

दिल्ली साम्राज्य के मुस्लिम राज्यपालों के अधीन पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रारंभ तक का माण्डू का इतिहास महत्वपूर्ण प्रतीत नहीं होता। छुट-पुट अवशेषों को देखकर ऐसा जान पड़ता है कि चौदहवीं शताब्दी में दुर्ग के भीतर कुछ हिन्दू-जैन मन्दिरों का निर्माण हुआ। इन राज्यपालों ने माण्डू में जब-तब शिविर अवश्य लगाए परन्तु अपनी राजधानी धार को ही बनाया। मुहम्मद-बिन-तुगलक के शासनकाल में दिलावर खाँ गौरी मालवा का राज्यपाल था। उसने दिल्ली के सुल्तानों की तेजी से बिगड़ती हुई राजनीतिक स्थिति से लाभ उठाकर उस प्रान्त पर, जो उस समय उसके अधिकार में था, लगभग पूर्ण रूप से अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। 1401 ई. में उसने औपचारिक तथा अन्तिम रूप से स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी और शाही खिताब धारण किये। जहाँ तक माण्डू के वर्तमान स्मारकों का सम्बन्ध है, वहाँ का अधिक महत्वपूर्ण इतिहास इसी समय अर्थात् 1401 ई. से प्रारम्भ होता है। दिलावर खाँ ने यद्यपि धार को अपनी राजधानी बनाए रखा तथापि वह अक्सर माण्डू भी जाया करता था और कई बार तो उसने अपना राजदरबार भी यहीं लगाया। सिंहासनारूढ़ होने के बाद वह अधिक समय तक जीवित नहीं रहा। 1405 ई. में उसकी मृत्यु हो गई। इस समय उसके शासन काल में माण्डू में हुए भवन-निर्माण सम्बन्धी कार्यों के दर्शन केवल तारापुर गेट तथा शाही क्षेत्र में उसके नाम पर बनी मस्जिद में होते हैं। उसके शासनकाल में ही उसके बेटे अल्प खाँ ने पहाड़ी की वर्तमान किलेबन्दी तथा किले के भीतर हुए अन्य सुधारों का कार्य अपने हाथ में लिया और बाद में अपने शासन काल में यह निर्माण कार्य पूरा किया।

अल्प खाँ 1405 ई. में होशंग शाह के नाम से अपने पिता के सिंहासन पर आसीन हुआ और उसने मालवा की राजधानी स्थायी रूप से माण्डू में स्थानान्तरित कर दी। उसने 27 वर्ष के लम्बे समय तक यहाँ शासन किया और राज्य की सीमाओं का उत्तर में काल्पी तक तथा दक्षिण में खेरल तक विस्तार किया। उसकी युद्धप्रिय मनोवृत्ति के कारण

गुजरात, दिल्ली और जौनपुर की पड़ोसी राजशक्तियां उसके विरुद्ध हो गई । गुजरात के राजाओं के साथ निरन्तर युद्ध करते रहने के कारण एक बार तो उसे अपने सिंहासन से भी हाथ धोना पड़ा था । परन्तु कुछ ही समय पश्चात् उसे पुनः सिहांसनारूढ़ होने में सफलता प्राप्त हुई । घोर युद्धों के इस वातावरण में भी उसने स्थापत्य कला में अपनी उत्तम रुचि का प्रदर्शन किया । पूर्व के देशों के सर्वोत्तम स्मारकों की श्रेणी में आने वाले दिल्ली गेट, विशाल मस्जिद (जामी-मस्जिद) तथा उसके अपने मकबरे जैसे शानदार भवनों में उसकी उत्तम रुचि लक्षित होती है । शाही क्षेत्र में स्थित आलीशान भवनों में से कुछ का निर्माण, संभवतः सुल्तान होशंग शाह ने स्वयं अपने राजमहल तथा राज-दरबार के प्रयोग हेतु करवाया । मुस्लिम इतिहासकारों के विचार में माण्डू की जटिल किलेबन्दी उस समय के विश्व[1] में बहुत अनोखी थी जिसके अधिकांश भाग का निर्माण होशंग शाह ने पूरा करवाया, जो इस बात का प्रमाण है कि वह न केवल निर्माता बल्कि सैनिक दावपेचों के ज्ञान से सम्पन्न सेनापति भी था । शासन की बागडोर अपने बेटे गज़नी खाँ के जिम्मे छोड़ कर, 1435 ई. में प्रजा का परमप्रिय शासक[2] होशंग शाह मृत्यु को प्राप्त हुआ । गज़नी खाँ, महमूद शाह के नाम से सिंहासन पर आसीन हुआ ।

महमूद शाह अल्पकाल के लिए ही शासन कर पाया क्योंकि 1436 ई. में उसके अपने ही विश्वास-पात्र, महमूद खाँ द्वारा जहर दे दिये जाने के कारण उसका देहावसान हो गया । इसके पश्चात् शीघ्र ही महमूद खाँ ने सिंहासन पर स्वयं अधिकार कर लिया । उसकी मृत्यु के साथ ही मालवा में गौरी वंश के शासन का अन्त हुआ । माण्डू में उसके काल के निर्मित स्मारकों में से अब केवल सागर-झील के पूर्व में स्थित मलिक मुघीस की मस्जिद ही बची है ।

---

[1] फरिश्ता तथा जहाँगीर दोनों ने दुर्ग के रक्षात्मक प्रबन्धों का प्रशंसात्मक शब्दों में उल्लेख किया है ।

[2] कहा जाता है कि उसकी मृत्यु के कुछ ही समय पश्चात् उसके मकबरे को पवित्र माना गया । तब से पिछली शताब्दी तक उसमें प्रतिवर्ष, उर्स का आयोजन किया जाता था ।

खिलजी वंश के माण्डू के प्रथम शासक महमूद शाह को सुल्तान कहना अनुचित न होगा क्योंकि वह सदा सैनिक अभियानों में व्यस्त रहता था, जिसके परिणामस्वरूप उसके 33 वर्ष के लम्बे शासनकाल में मालवा साम्राज्य का सर्वाधिक विस्तार हुआ । उसने गुजरात, दक्कन तथा जौनपुर के शासकों के विरूद्ध ही नहीं, अपितु दिल्ली सुल्तान के खिलाफ भी युद्ध किये । मेवाड़ का राणा ही प्राय: उसके अभियानों का शिकार होता था । उसको पराजित करने के उपलक्ष्य में उसने माण्डू में एक सात–मंजिली भव्य मीनार बनवाई परन्तु अब उसका केवल तहखाना ही विद्यमान है । वह असाधारण रूप से पराक्रमी होते हुए भी विद्या में अभिरुचि रखने तथा इस क्षेत्र में लोगों को प्रोत्साहन देने और मानव प्रकृति को सहानुभूतिपूर्वक समझने के लिए समान रूप से प्रसिद्ध था । यही कारण है कि उसके दीर्घकालीन शासन के दौरान उसकी प्रजा, चाहे हिन्दू हो या मुस्लिम, समान रूप से समृद्ध तथा खुशहाल थी । उसके इन उत्तम व्यक्तिगत गुणों के कारण ही उसके शासन काल में मालवा एक विशाल और समृद्ध राज्य बन गया तथा उस समय के मुस्लिम जगत में भी उसे इसी रूप में मान्यता[1] प्राप्त हुई ।

उसके शासन काल में राजधानी में निर्मित कई बड़े–बड़े भवन भी उसके द्वारा स्थापत्य में ली गई रुचि के प्रमाण हैं । इनमें से उसका अपना मकबरा जिस पर चारों ओर संगमरमर की परत चढ़ी हुई थी, विद्यालय अथवा मदरसा जो आजकल 'अश्रफी महल' कहा जाता है, उपरोक्त सात–मंजिली मीनार आदि भवन सर्वाधिक भव्य थे । इसके अतिरिक्त उसने अपने पूर्ववर्ती सुल्तान होशंग शाह गौरी द्वारा छोड़ी गयी विशाल मस्जिद तथा मकबरे का अधूरा निर्माण कार्य पूरा करवाया । यद्यपि उसके द्वारा निर्मित भवन नमूने में बहुत बढ़िया थे परन्तु उनकी ऊँचाई बहुत

---

[1]मालवा की इस ख्याति के कारण ही तैमूर के पोते सुल्तान अबू सईद तथा मिश्र के खलीफा ने माण्डू–राजदरबार में अपने राजदूत भेजे । उनके इस सद्भावना–प्रदर्शन के बदले में मालवा–सुल्तान ने उन्हें कुछ दुर्लभ तथा बहुमूल्य उपहार भेंट किये ।

अधिक होने तथा उनका निर्माण हड़बड़ी में और पर्यवेक्षण अयोग्य वास्तुविदों द्वारा किया जाने के कारण, ये भवन उसकी मृत्यु के कुछ समय पश्चात् ही ढह गए और अब उनके शानदार भग्नावशेष ही विद्यमान हैं।

1469 ई. में महमूद का देहान्त हुआ, और उसका ज्येष्ठ पुत्र गयासुद्दीन उसका उत्तराधिकारी बना। अपने पिता के विपरीत उसने 31 वर्ष का अपना सम्पूर्ण शासनकाल शान्तिपूर्ण कार्यों में लगाया। नारी[1] के प्रति अत्यधिक आसक्ति होते हुए भी उसने मदिरा को कभी छुआ तक नहीं। वह व्यवस्था, उदारता, न्याय तथा दानशीलता आदि भावों द्वारा परिचालित अत्यधिक धर्मपरायण व्यक्ति था। उसके लम्बे शासनकाल के दौरान न के बराबर युद्ध हुए और उसके साम्राज्य में शान्ति, खुशहाली तथा समृद्धि व्याप्त थी। लगभग 80 वर्ष की आयु में अपने बेटे नासिरुद्दीन द्वारा हलाहल दे दिये जाने के कारण उसकी मृत्यु हुई। जहाँगीर ने अपने संस्मरणों में उसकी मौत की इस घटना का बड़ा मर्मस्पर्शी वर्णन किया है।[2]

गयासुद्दीन के समय में हुए भवन-निर्माण कार्य के सम्बन्ध में निश्चित रूप में कम जानकारी प्राप्त है। वह अपने पूरे शासन-काल में माण्डू में ही रहा। इसलिए उसने कुछ भवनों के निर्माण द्वारा राजधानी को अवश्य ही सुशोभित किया होगा। इनमें से सुरम्य स्थान पर बने जहाज़-महल को, इसकी संरचना में सर्वत्र व्याप्त आनन्दोल्लास की प्रवृत्ति को देखते हुए, गयासुद्दीन के काल का मानना ही उपयुक्त है।

---

[1] कहा जाता है कि एक समय तो उसके अन्तःपुर में विभिन्न वर्गों तथा सम्प्रदायों की 15,000 स्त्रियाँ थीं। उसकी दाईं ओर 500 सुंदर तुर्की युवतियाँ तथा बाईं ओर 500 ऐबिसीनियां की युवतियाँ पुरुषों के परिधान में, रक्षकों के रूप में खड़ी रहती थीं। यह सभी सशस्त्र तथा वर्दी पहने हुए होती थीं।

[2] नासिरुद्दीन पर लगाए गए पितृहत्या के इस जघन्य अपराध के दोष ने उसे शेरशाह तथा जहाँगीर की नज़रों से गिरा दिया। कहा जाता है कि दोनों ने माण्डू भ्रमण के समय उसके मकबरे को अपवित्र किया और उसके अवशेषों को कई प्रकार से तिरस्कृत किया।

नासिरुद्दीन 1500 ई. में सिंहासनारूढ़ हुआ परन्तु उसका राजसी-जीवन दुःखमय तथा अशान्तिपूर्ण रहा । उसे सर्वप्रथम अपने साम्राज्य की गृहकलह तथा अन्य विद्रोहों को दबाना पड़ा । शायद अपने अपराध की घटना सर्वदा उसके मन को कचोटती रहती थी जिसके कारण अन्ततः वह शक्की तथा हिंसक स्वभाव का हो गया । 10 वर्ष के दुःखपूर्ण शासन के पश्चात् ही साम्राज्य का कार्यभार अपने तीसरे बेटे महमूद के जिम्मे छोड़कर तीव्र ज्वर के कारण वह मृत्यु को प्राप्त हुआ । अपने पूर्वजों की ही भाँति उसे भी भवन-निर्माण का बहुत शौक था जिसका सर्वोत्तम वर्तमान उदाहरण रेवा-कुण्ड के समीप बना सुन्दर प्रासाद है, जो अब बाज़ बहादुर का माना जाता है ।

पिता के काल में उत्पन्न हुए राज्य के भीतरी झगड़े महमूद द्वितीय को अधिक उग्र रूप से परेशान करते रहे । वह मुख्यतः राजपूत सरदार मेदिनी राय की सहायता से ही इन परिस्थितियों का सामना कर पाया । अन्त में मेदिनी राय सुल्तान तथा उसके कार्य-कलापों पर काफी नियंत्रण रखने लगा । शीघ्र ही उसकी बढ़ती हुई शक्ति सुल्तान के लिए असहनीय हो गई । सुल्तान किसी बहाने माण्डू से भाग निकला । उसने गुजरात के मुज़फ्फर शाह द्वितीय की सहायता से राजपूत सरदार को वहाँ से मार भगाया और पुनः सत्तारूढ़ हुआ । परन्तु मुज़फ्फर शाह के उत्तराधिकारी बहादुर शाह के साथ महमूद मित्रता नहीं निभा सका । इसलिए बहादुर शाह ने 1526 ई. में मालवा पर चढ़ाई करके माण्डू-दुर्ग पर अधिकार करने में सफलता प्राप्त की । तत्पश्चात् महमूद को बन्दी बना लिया और विजित प्रदेश को अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया । माण्डू में स्थित गदा शाह का भवन और दुकान तथा महमूद के राजदरबार के अधिकारी दरिया खाँ का मकबरा आदि तीन महत्त्वपूर्ण स्मारक निश्चित रूप से महमूद के शासनकाल के माने जा सकते हैं । इनमें से गदा शाह का मकान राजपूत सरदार मेदिनी राय से सम्बन्धित जान पड़ता है क्योंकि इसमें दो चित्र हैं जिनमें किसी सरदार तथा उसके साथ उसकी रानी चित्रित है, जो मेदिनी राय तथा उसकी पत्नी के हो सकते हैं ।

## माण्डू

मालवा 1534 ई. तक गुजरात का आश्रित राज्य रहा । 1534 ई. में हुमायूँ ने किले पर विजय प्राप्त की और सम्राट् बहादुर शाह अपनी अश्व-सेना के साथ खड़ी चट्टान से नीचे कूदते हुए माण्डू में स्थित सोनगढ़ से बचकर भाग निकला । परन्तु हुमायूँ के मालवा से प्रस्थान करते ही खिलजी वंश के अधिकारी मल्लू खाँ ने नर्मदा तथा विदिशा का समूचा मध्यवर्ती प्रदेश पुनः हस्तगत कर लिया और 1536 ई. में कादिर शाह के नाम से सिंहासन पर बैठा ।

1542 ई. में शेरशाह ने आक्रमण करके मालवा पर अधिकार कर लिया और शुजात खाँ को वहाँ का गवर्नर नियुक्त किया । 1554 ई. में शुजात खाँ मृत्यु को प्राप्त हुआ जबकि वह करीब-करीब पूरी तरह से स्वतन्त्र सत्ता प्राप्त कर चुका था । उसके तीन बेटों में परस्पर पारिवारिक संघर्ष के पश्चात् उनमें से मलिक बायज़ीद, सुल्तान बाज़ बहादुर के नाम से एक स्वतन्त्र शासक के रूप में अभिषिक्त हुआ । ऐसा प्रतीत होता है कि राजनीतिक परिवर्तन की इन परिस्थितियों के दौरान माण्डू में बहुत कम भवन-निर्माण कार्य हुआ क्योंकि अब वहाँ इस काल में निर्मित कोई उल्लेखनीय स्मारक दिखाई नहीं देता ।

बाज़ बहादुर ने प्रारम्भ में तो कुछ उत्साह दिखाया परन्तु दुर्गावती के हाथों अपनी अकीर्तिकार पराजय के उपरान्त उसने युद्ध का परित्याग ही कर दिया । इसके बाद वह पूर्ण रूप से संगीत साधना में तल्लीन हो गया । इस क्षेत्र की प्रसिद्ध सुन्दरी रूपमती उसकी प्रिय संगिनी तथा पत्नी सिद्ध हुई । इन दोनों का परस्पर निस्वार्थ तथा निष्ठापूर्ण प्रेम मालवा के लोकगीतों का सर्वप्रिय विषय है । इन्हीं परिस्थितियों में अकबर के जनरल आदम खाँ ने 1561 ई. में मालवा पर आक्रमण कर, सारंगपुर के नजदीक बाज़ बहादुर को पराजित किया । वह तो युद्ध से भाग खड़ा हुआ परन्तु रूपमती आक्रान्ताओं के हाथ लग गई । इस वफादार रमणी ने शत्रु द्वारा दिये गए प्रलोभनों का शिकार न होकर, आत्महत्या करके मौत को

गले लगाना श्रेयस्कर समझा[1] । माण्डू में स्थित बाज़ बहादुर तथा उसकी पत्नी रूपमती से सम्बद्ध स्मारकों में से रेवा-कुण्ड नामक सुन्दर जलाशय तथा उसके समीप बाज़ बहादुर के ही नाम पर निर्मित प्रासाद और निकट ही पहाड़ी के शिखर पर निर्मित रूपमती के मण्डपों का उल्लेख किया जा सकता है ।

यद्यपि मुगल काल में कुछ समय तक भवन-निर्माण के कार्य को प्रोत्साहन मिलता रहा परन्तु माण्डू में पहले-सा वैभव नहीं रहा । माण्डू में पाये गए अभिलेखों के अनुसार सम्राट् अकबर ने दक्कन के सैनिक अभियानों के दौरान चार बार इस दुर्ग का दौरा किया । अकबर के काल में महमूद ख़िलजी का संगमरमर का बना मकबरा टुकड़े-टुकड़े होकर गिरने को ही था । उसने, कुछ अकलात्मक ढंग से ही सही, उसका जीर्णोद्धार करवाया । उसके काल में ही, दुर्ग के तत्कालीन गवर्नर शाह बुदाघ ख़ाँ ने सामान्यतः नीलकण्ठ के नाम से प्रसिद्ध महल बनवाया । अकबर का उत्तराधिकारी जहाँगीर माण्डू की भव्यता से और भी अधिक प्रभावित हुआ । वह लगभग सात महीने तक इस किले में रहा और इस समय में उसने पुराने भवनों का जीर्णोद्धार तथा नए भवनों का निर्माण करवाया । उसने अपने प्रसिद्ध संस्मरणों में इस स्थान का सजीव वर्णन किया है जिससे यह विदित होता है कि वह यहाँ पर शानदार राजकीय समारोहों, खेलों तथा आमोद-प्रमोद के अन्य कार्यक्रमों का आयोजन करके किस प्रकार इसके दृश्यों की मनोहरता तथा सौन्दर्य का आनन्द लिया करता था ।

शाहजहाँ ने राजकुमार की हैसियत से दो बार माण्डू का दौरा किया । तदनन्तर 1659 ई. में उसके राजदरबार के चार वास्तुविदों ने इस स्थल के स्थापत्यों को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए माण्डू का दौरा किया । होशंग शाह के मकबरे में उत्कीर्ण अभिलेख उक्त तथ्य को

---

[1] सारंगपुर में जीर्ण-शीर्ण अवस्था में स्थित एक गुम्बदी भवन, स्थानीय तौर पर, रूपमती के मकबरे के नाम से प्रसिद्ध है परन्तु इस पारम्परिक विश्वास की प्रमाणिकता निश्चित करना संभव नहीं है ।

प्रमाणित करता है । इस अभिलेख में उपर्युक्त चार वास्तुविदों में से एक उस्ताद हामिद का उल्लेख हुआ है, उस्ताद हामिद का आगरा के ताजमहल के निर्माण से निकट सम्बन्ध था, इस अनुक्रम से मुगल सम्राटों की माण्डू–यात्रा तथा उनके द्वारा वहाँ के स्मारकों में ली गई सक्रिय रुचि को देखते हुए इन स्मारकों का, आगरा के प्रसिद्ध स्मारकों सहित अध्ययन तथा परस्पर तुलना करना लाभकर सिद्ध होगा । इससे आगरा की वास्तुशैली पर माण्डू के स्मारकों के सम्भावित प्रभाव को भी समझा जा सकता है ।

बाज़ बहादुर के पतन के साथ ही माण्डू के वैभव का अन्त हो चुका था । जहाँगीर के उत्तराधिकारियों ने माण्डू–दुर्ग में अधिक रूचि नहीं ली । इसलिए किला उजड़ना प्रारम्भ हो गया । परिणाम–स्वरूप इसका पहले जैसा महत्व नहीं रहा । मुगल साम्राज्य के अन्तिम दिनों के इतिहास में माण्डू का कोई उल्लेख नहीं मिलता । 1732 ई. में मराठों ने मल्हार राव के नेतृत्व में धार के समीप स्थित तिरला के युद्ध में मालवा के मुगल गवर्नर दिया बहादुर को पराजित किया । तब से यह दुर्ग धार के मराठा शासकों के अधीन रहा ।

## वास्तुकला

इन स्मारकों का अलग–अलग विवरण देने से पहले इनकी स्थापत्य सम्बन्धी विशेषताओं के विषय में जानकारी प्राप्त कर लेना पर्यटकों के लिए हितकर सिद्ध होगा । माण्डू के अधिकतर वर्तमान स्मारकों के निर्माण में अधिक से अधिक 125 वर्ष लगे । इनका निर्माण 1401 ई. से 1526 ई. के मध्य में अर्थात् उस युग में हुआ जब मालवा के मुस्लिम शासकों ने स्वतन्त्र रूप से माण्डू में शासन किया । दिल्ली तथा अन्य स्थानों की ही भाँति यहाँ पर भी स्थायी रूप से पैर जमाने से पहले उन्होंने हिन्दू मन्दिरों को अपवित्र और विनष्ट करने तथा विनष्ट मन्दिरों की सामग्री को अपनी वास्तुकलात्मक निर्माणयोजनाओं के अनुरूप मस्जिदों

तथा मकबरों के निर्माण में उपयोग करने का सरल उपाय अपनाया। माण्डू में स्थित, दिलावर खाँ तथा मलिक मुघीस दोनों की मस्जिदें माण्डू के भारतीय-इस्लामी स्थापत्य के इस प्रारम्भिक रूप अथवा प्रथम चरण का उदाहरण हैं। मुगलकालीन नीलकण्ठ, जाली-महल और कुछ अन्य भवनों को छोड़कर शेष सभी स्मारकों का निर्माण माण्डू स्थापत्य के द्वितीय अर्थात् क्लासिकी चरण में हुआ। इन स्मारकों में थोड़ी बहुत विविधताएँ हैं। इन विविधताओं का कारण था कालान्तर तथा वास्तुकला और रुचि में अन्तर। माण्डू के वर्तमान भवनों में से सर्वाधिक विशाल तथा सर्वोच्च जामी-मस्जिद पूर्णतया: विकसित इस क्लासिकी चरण की मस्जिदों का सर्वोत्तम उदाहरण है। माण्डू में विद्यमान मकबरों में होशंग शाह का मकबरा सर्वश्रेष्ठ है। परन्तु किसी समय महमूद का मकबरा, जिसके साथ अपनी अक्षुणावस्था में 45.7 मीटर ऊँची सात-मंजिली विजय-मीनार निर्मित थी, अधिक प्रभावशाली तथा विस्मयप्रेरक भवन रहा होगा। परन्तु अब इसका तहखाना और भग्नावशेष ही देखने को मिलते हैं। प्रासादों में साथ-साथ खड़े जहाज़-महल तथा हिण्डोला-महल, एक ही समय में निर्मित होने पर भी, सौन्दर्य तथा निर्माण की दृष्टि से अद्भुत वैषम्य है।

कोई पर्यटक जिसने देश के अन्य भागों में भी ऐसे स्मारकों के दर्शन किये हों, इन भवनों की कुछ विशेषताओं से सहज ही प्रभावित हो जाएगा। साधारणतया यह दृष्टिगोचर होता है कि माण्डू के शासकों तथा निर्माताओं ने भवनों को भीतर तथा बाहर से उतना अलंकृत करना पसन्द नहीं किया जितना कि देश के अन्य भागों में पाया जाता है। जामी-मस्जिद तथा हिण्डोला-महल को देखने से विदित होता है कि किस प्रकार उन्होंने निर्माण में सादगी तथा विशालता के द्वारा स्थापत्य में गरिमा एवं वैभव की कल्पना को साकार किया। यहाँ पर, केवल अलंकरण के उद्देश्य से कलात्मकता उत्पन्न करने के लिए लघु-गुम्बदों, मेहराबों तथा ताखों का योजनाबद्ध प्रदर्शन नहीं मिलता। जामी-मस्जिद में

मेहराबों तथा लघुगुम्बदों की पंक्तियों का प्रयोग अलंकरण के उद्देश्य से ही नहीं, अपितु मुख्य रूप से कार्यात्मक अथवा निर्माणात्मक कारणों से किया गया है । पत्थर पर सूक्ष्म तथा जटिल जाली का काम माण्डू के भवनों में बहुत कम मिलता है । जालीदार कार्य के सर्वोत्तम समकालीन उदाहरण अहमदाबाद तथा दिल्ली में मिलते हैं । अन्य स्थानों पर मस्जिदों तथा मकबरों के अग्रभागों को सुशोभित करती हुई ऊँची-ऊँची मीनारों का माण्डू में सर्वथा अभाव है । महमूद का विजय स्तम्भ मीनार की दृष्टि से पूरा नहीं उतरता । निर्माण में मजबूती की दृष्टि से कुछ ही भवन हिण्डोला-महल की समानता कर सकते हैं । यदि इसके रूपाँकनों का इरादा इसको पूर्ण स्थायित्व प्रदान करने का था तो भी इसकी बड़ी-बड़ी और पक्की दीवारों में अति की गई है । इसकी चिनाई सुदृढ़ एवं अलंकरण रहित है । यहाँ तक कि माण्डू-स्थापत्य के अलंकरण का प्रतीक जहाज़-महल भी, अन्यत्र स्थित इससे मिलते जुलते भवनों की तुलना में, प्रचुर मात्रा में अलंकृत नहीं कहा जा सकता । इसमें रंगीन टाइलों तथा पत्थरों का अलंकरण के उद्देश्य से बहुत कम प्रयोग हुआ है । जाली का काम तथा परदी दीवारें भी अधिक नहीं हैं । यहाँ सामान्य आलंकारिक अभिप्रायों का अतिरंजित प्रदर्शन नहीं मिलता फिर भी, यह भवन बड़े मोहक ढंग से अलंकृत दिखाई देते है जिसके मुख्य कारण हैं — दो तालाबों के मध्य में इसकी स्थिति और इस पर बने क्षितिज-रेखा को भेदते हुए इसके सुन्दर तथा छोटे-छोटे गोलाकार एवं नोंकदार गुम्बद ।

## ३. स्मारक

### I. किलेबन्दी तथा प्रवेशद्वार

माण्डू[1] की स्थलाकृति के सूक्ष्म सर्वेक्षण अथवा परीक्षण द्वारा ज्ञात होता है कि किस प्रकार हिन्दू और मुस्लिम शासकों ने माण्डू को पूर्ण रूप से अपने युग की परिस्थितियों के अनुकूल बनाया । स्पष्टत: माण्डू की नैसर्गिक स्थिति द्वारा प्रदत्त, सामरिक महत्व की सुविधाओं की ओर सर्वप्रथम उन्हीं का ध्यान आकर्षित हुआ । आकार में विषम इस पहाड़ी पर पश्चिम की ओर सोनगढ़ नाम से प्रसिद्ध एक ऊँचा बहिर्विष्ट उभार है और पूर्व की तरफ पहाड़ी के मध्य-भाग को भेदती हुई घाटी की तंग परन्तु गहरी खाई है । उत्तर की ओर ऊँचा उठा हुआ मालवा का पठार है । यह पहाड़ी इस पठार का एक भाग है । दक्षिण की ओर 300 मीटर या इससे भी कुछ अधिक नीचे विस्तृत निमाड़ का मैदान है जिसके कारण इस तरफ से यह पहाड़ी घुसपैठियों के लिए अगम्य प्राय हो गई है । पहाड़ी की स्थलाकृति के यह घटक, न्यूनाधिक रूप में किलेबन्दी तथा इस पर की आबादी के निर्धारक तत्व थे (फलक 9) ।

---

[1]माण्डू पठार के बिल्कुल पश्चिमी किनारे पर, पृथक पहाड़ी के ऊपर, प्रारम्भिक किलेबन्दी के भग्नावशेष मिले हैं, जो स्थानीय रूप से बूढ़ी (प्रारम्भिक अथवा प्राचीन माण्डू) के अवशेष कहे जाते हैं । यह भग्नावशेष एक अगम्य तथा सघन जंगल के बीचोंबीच स्थित हैं । इनको देखकर यह प्रतीत होता है कि यहाँ दो या अधिक प्रवेशद्वार थे जिनमें से एक पश्चिम की तरफ तथा दूसरा पूर्व की तरफ था । भीतर की तरफ एक बड़ी झील है तथा मन्दिरों के एक बड़े समूह के अवशेष है । इनमें से पाँच मन्दिर लम्बाई-चौड़ाई में बहुत बड़े दिखाई देते हैं । बहुसंख्यक प्रतिमाओं तथा उत्कीर्ण फलकों में गणेश की विराट मूर्ति, शैव-देवी दुर्गा के कुछ चित्र आदि भी सम्मिलित हैं । इस क्षेत्र का अभी तक पूरी तरह से अन्वेषण नहीं हुआ है । मूर्तियों की शैली को देखते हुए मन्दिरों का निर्माण काल दसवीं शताब्दी माना जा सकता है । यह भी संभव है कि गुर्जर-प्रतिहार अभिलेखों में उल्लिखित मण्डपिका के रूप में वर्तमान माण्डू के स्थान पर बूढ़ी माण्डू का ही उल्लेख किया गया हो । बहुत संभव है कि पूर्ववर्ती परमार शासकों ने बूढ़ी माण्डू का त्याग करके दसवीं अथवा ग्यारहवीं शताब्दी के अन्तिम दिनों में किसी समय माण्डू की नई किलेबन्दी की हो । देखिये विक्रम-स्मृति-ग्रन्थ पृष्ठ सं. 598, अनुवर्ती पन्ने ।

मंडप-दुर्ग की प्रारम्भिक किलेबन्दी से सम्बन्धित देखने योग्य अब कुछ अधिक नहीं है । परन्तु मुञ्ज-तालाब की स्थिति को देखकर भली-भाँति यह अनुमान लगाया जा सकता है कि परमार राजाओं द्वारा मुख्य रक्षात्मक (निर्माण) कार्य इस तालाब के चारों ओर के क्षेत्र (अर्थात् शाही क्षेत्र) में ही केन्द्रित थे । यह क्षेत्र तीन तरफ से गहरी घाटियों द्वारा सुरक्षित है । पहाड़ी के दक्षिण की तरफ फैला हुआ पठार है । यहाँ बड़े सुविधायुक्त स्थान पर नगर स्थित था । जब यहाँ की किलेबन्दी की गई थी तब यह क्षेत्र पहाड़ी के भीतर एक स्वतन्त्र दुर्ग के रूप में स्वंय अपनी रक्षा करने में समर्थ था । यहाँ हिन्दू काल में निर्मित मन्दिरों के अवशेषों के बीच लोहानी गुफायें स्थित हैं । हिन्दू लोग पत्थर की चिनाई में चूने का गारे के रूप में विरल ही प्रयोग करते थे । इसलिए बहुत संभव है कि परमारों द्वारा बड़े-बड़े शिलाखण्डों की सूखी चिनाई से किलेबन्दी की गई हो । परवर्ती काल के मुस्लिम राजाओं ने अपने अत्यधिक मजबूत चिनाई के कार्यों के लिए चूने के गारे का आंशिक रूप से सहर्ष प्रयोग किया । वर्तमान प्रवेशद्वारों में से भंगी दरवाज़े तथा रामपोल दरवाज़े में हिन्दुओं की स्तम्भ और धरण-निर्माण-पद्धति के स्पष्ट चिन्ह मिलते हैं । मुस्लिम आक्रमण से पूर्व माण्डू में, ऐतिहासिक महत्व की कोई प्रचण्ड अथवा दीर्घकालिक घेराबन्दी नहीं हुई थी । अतः संभव है कि परमारों द्वारा की गई अर्थात् प्रारम्भिक किलेबन्दी न्यूनाधिक रूप में, उपरोक्त सीमित क्षेत्र की ही हुई हो । भंगी दरवाज़े तथा रामपोल दरवाज़े की स्थिति से भी इस निष्कर्ष की पुष्टि होती है । ऐसा प्रतीत होता है कि हिन्दू राजाओं ने आपातकाल के लिए सोनगढ़ की कुछ किलेबन्दी की । सोनगढ़ शुद्ध हिन्दू नाम होने के कारण हिन्दूकाल में किलेबन्दी की परिस्थितियों का बोध कराता है । सोनगढ़ के भीतर भी एक प्राचीन हिन्दू जलाशय है जिसके समीप मन्दिरों के भग्नावशेष स्थित हैं ।

पहाड़ी के शिखर की परिधि लगभग 45 किलोमीटर है और इसका अधिकांश भाग पत्थर के टुकड़ों तथा अनगढ़े पत्थर की बनी पक्की तथा

मजबूत चिनाई वाली दीवार द्वारा रक्षित है, स्मरण रहे कि यह सब आश्चर्यजनक किलेबन्दी उस युग में की गई जब लोग बारूद तथा तोपों के प्रयोग से अनभिज्ञ थे, पहाड़ी की सामान्य किलेबन्दी के अतिरिक्त पठार पर उन दो अहातों की भी किलेबन्दी की गई जिनमें शाही महल स्थित थे । इन अहातों में एक था विशाल शाही क्षेत्र जिसमें आलीशान भवनों का बड़ा समूह था । रेवाकुण्ड के नजदीक दूसरा अहाता था । इसमें बाज़ बहादुर का महल तथा कुण्ड के समीपस्थ अन्य भवन सुरक्षित था । इन दोनों के अतिरिक्त सोनगढ़ का अगम्य किला था जो एक तंग डमरु-मध्य के कारण मुख्य पहाड़ी से पृथक हो गया और उसी के द्वारा पहाड़ी से जुड़ा हुआ था । असामान्य संकटों से रक्षा के उद्देश्य से इस दुर्ग का निर्माण हुआ था । रक्षा के ये प्रबन्ध इतने अधिक तथा जटिल थे कि फरिश्ता जैसे मुस्लिम इतिहासकार ने इन्हें तत्कालीन विश्व में अनूठा कहा है ।

मानचित्र (फलक 9) में वर्तमान किलेबन्दी पर दृष्टि डालने से स्पष्ट होगा कि किस प्रकार पहाड़ी के विभिन्न किनारों पर रक्षात्मक प्रबन्ध किये गए थे । सैनिक दृष्टि से किला उत्तर की तरफ से अधिक अरक्षित है । यहाँ पर चढ़ाई थोड़ी-थोड़ी बढ़ती चली गई है । पर्यटक घुमावदार सड़क से होता हुआ पहाड़ी के शिखर तक पहुँच जाता है । यही किले तक पहुँचने का मुख्य तथा आम रास्ता था । इसलिए, निर्माणकर्ताओं ने इसकी किलेबन्दी और सैनिक संकट से इसकी सुरक्षा करने में विशेष परिश्रम किया । किले का प्रवेश द्वार भी इसी तरफ है । ऐतिहासिक शहर दिल्ली की तरफ होने के कारण इसका नाम 'दिल्ली-दरवाज़ा' रखा गया । स्वयं इस तक पहुंचने के लिए भी प्रवेशद्वारों की शृंखला थी । दीवारों के घेरे द्वारा इसकी बहुत अच्छी किलेबन्दी की गई थी । आलमगीर एवं भंगी दरवाज़े के कारण इस दिशा में, अन्यथा कमज़ोर रक्षात्मक प्रबन्ध और अधिक सुदृढ़ हुए । आलमगीर एवं भंगी दरवाज़े के बीच से आजकल एक सड़क निकली हुई है ।

कई बार हुई दुर्ग की घेराबन्दी में मुख्य प्रवेशद्वार दिल्ली-दरवाज़ा, अवश्य ही शत्रु के आक्रमण का निशाना रहा होगा । यह दरवाज़ा अब कुछ ध्वस्तावस्था में है । पक्के रास्ते पर जाते समय, पाँच मेहराबदार द्वारों वाले इस गेट के दर्शन होते हैं । इनमें से सर्वोच्च द्वार बहुत ऊँचा और देखने में भव्य रहा होगा । परन्तु यह बहुत समय पहले ही धराशायी हो चुका है । अब इसके केवल स्तम्भ ही विद्यमान हैं । इसके नीचे फर्श से 8.5 मीटर ऊँची तथा 4.04 मीटर चौड़ी दूसरी मेहराब है । बहुत अच्छे समानुपात वाली इस मेहराब के शीर्ष पर, इमारत के लाल बलुए पत्थर से सुखकर वैषम्य प्रस्तुत करते हुए सुन्दर मोखे बने हैं जिनको उत्तम कोटि की नीली मीनाकारी (एनैमल) से सन्निविष्ट किया गया है अन्य तीन मेहराबें बाद में बनी प्रतीत होती हैं । इसके बाद भीतरी द्वार है जिनके दोनों ओर सन्तरियों के लिए कक्ष थे । इन मेहराबदार द्वारों के बीच का सम्पूर्ण मार्ग मूलतः आवृत था परन्तु अब इसकी छत का बहुत सारा भाग गिर चुका है ।

इस तरफ एक अन्य अपेक्षाकृत अगम्य द्वार है जिसे रामपोल दरवाज़ा कहते हैं । इसका निर्माण कुछ पहले हुआ । उत्तर-पूर्व में पहाड़ी के बीच सैन्य सुरक्षा (एहतियात) के रूप में घाटी की गहरी खाई विद्यमान थी । यह खाई मुँह की तरफ (मुहाने पर) से "सात सौ सीढ़ी" नाम से प्रसिद्ध बहुत सी सीढ़ियों वाले बाँध द्वारा अवरुद्ध कर दी गई थी । इसलिए दुर्ग प्राचीर खाई के सामने पहाड़ी के किनारे न बना कर बाँध के साथ जोड़ी गई है जहाँ से यह दक्षिण की तरफ और आगे चलती गई है । दक्षिण की तरफ पूर्वी सिरे पर दोहरी किलेबन्दी वाला प्रवेशद्वार 'जहाँगीरपुर-दरवाज़ा' है । आजकल, यह द्वार घने जंगल के कारण इस तरफ से अगम्यप्राय हो गया है । यद्यपि यह पहाड़ी दक्षिण की तरफ से बहुत ढालू है तथापि ऐतिहासिक लेखों के अनुसार किले पर अधिकतर आक्रमण इसी तरफ से हुए । इसीलिए इस तरफ से दुर्ग की सुरक्षा हेतु अविछिन्न दुर्ग प्राचीर तथा घाटी में लगभग 3.2 किलोमीटर की दूरी पर

स्थित भगवानपुर दरवाज़े का निर्माण करना पड़ा । इस समय, इस द्वार तक पहुँचने के लिए एक पगडण्डी को छोड़कर अन्य कोई मार्ग नहीं है । पर्यटक केवल इस पगडण्डी के द्वारा इस द्वार तक पहुँच सकते हैं । बड़ी-बड़ी दीवारों द्वारा परिबद्ध, दोहरे मेहराबदार द्वार से युक्त इस गेट में किले के सामान्य रक्षात्मक प्रबन्ध किये गए हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि इस तरफ से निरन्तर आक्रमण होते रहने के कारण रेवाकुण्ड क्षेत्र की किलेबन्दी व सुरक्षा हेतु और अधिक रक्षात्मक प्रबन्ध किये गए क्योंकि इसमें कुछ प्रासाद निर्मित थे ।

किलेबन्दी की दीवार पहाड़ी के किनारे-किनारे, दक्षिण-पश्चिम की ओर उस स्थान तक चली जाती है जहाँ किले के सर्वाधिक महत्वपूर्ण द्वारों में से एक 'तारापुर-दरवाज़ा' स्थित है । किले के सैनिक इतिहास में अक्सर इस दरवाज़े का उल्लेख हुआ है । इसका यह नाम, नीचे निमाड़ के मैदान में स्थित तारापुर गाँव के नाम पर रखा गया है । यहाँ पहाड़ी पर खड़ी चढ़ाई है और यहाँ से नीचे मैदानों तक एक पक्का रास्ता जाता है । इतिहास में इस द्वार की ख्याति का कारण वे असामान्य परन्तु साहसिक सैनिक दाँव-पेच (रण-विधियां) थे जो कई बार हुमायूँ तथा अन्य वीर आक्रमणकारियों द्वारा अपनाये गए थे और जिनसे, शान्ति के समय अपने आप को सुरक्षित समझकर सुस्ता रही रक्षक-सेना को अचानक हमले द्वारा अधिकार में कर लिया जाता था अन्यथा विश्वास नहीं होता कि आक्रमणकारी, अपने सामने 304.8 मीटर की खड़ी चढ़ाई को देखकर भी तथा विशाल शिलाखण्ड, जोकि ढलान से नीचे लुढ़कते हुए सरलता से उन्हें कुचल सकते थे, फेंक कर मारने के लिए तैयार सतर्क रक्षक-सेना के होते हुए भी इस तरफ से बलपूर्वक प्रविष्ट होने का दुस्साहस कर सकते थे ।

मूलतः, इस द्वार में पक्की सीढ़ियों के सामने तोरणद्वार था जो दोनों तरफ से विशाल दीवारों द्वारा सुरक्षित था । अन्दर की तरफ दूसरा मेहराबदार द्वार था जिस पर एक अभिलेख-युक्त फलक दिखाई देता

है । इस फलक के अनुसार इस द्वार का निर्माण (1406-7 ई.) माण्डू के प्रथम मुस्लिम सुल्तान, दिलावर खाँ ने किया । दोनों द्वारों के बीच संलग्न सर्पाकार मार्ग ऊपर से मेहराबदार छत द्वारा आच्छादित था । इन अपेक्षाकृत पुराने तोरणद्वारों के बीच सीढ़ियों के साथ बाद में, सम्राट अकबर के आदेश पर, एक अन्य प्रवेशद्वार बनाया गया । इसका निर्माण मुख्यतः औपचारिक कारणों से हुआ । सैनिक सुरक्षा इसके निर्माण का गौण उद्देश्य था । इस द्वार की एक दीवार पर अंकित अभिलेख उक्त तथ्य को प्रमाणित करता है । इस प्रवेशद्वार के दोनों ओर के चौकोर बुर्जों का निर्माण स्पष्टतः प्रवेशद्वार के रक्षात्मक प्रबन्धों को और अधिक सुदृढ़ करने के प्रयोजन से हुआ ।

दुर्ग-प्राचीर, तारापुर दरवाज़ा से लेकर उत्तर-पश्चिम की ओर उस स्थान तक चली जाती है जहाँ माण्डू की मुख्य पहाड़ी का पठार भू-डमरु मध्य के द्वारा पश्चिम की तरफ स्थित सोनगढ़ की ऊँची पहाड़ी से मिलता है । समय-समय पर सोनगढ़ का प्रयोग माण्डू दुर्ग के आपातकालीन गढ़ के रूप में होता था । यहाँ सोनगढ़ के प्रवेशमार्ग पर मेहराबदार प्रवेश द्वार है जिसका उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में मराठों ने पुनर्निर्माण किया । सोनगढ़ की पहाड़ी भी पत्थर की बनी पक्की दीवारों द्वारा अच्छी प्रकार से सुरक्षित थी । इसके अन्दर मालव-सुल्तानों के काल के कोई रिहाइशी भवन नहीं हैं । ऐसा जान पड़ता है कि मालवा के सुल्तानों ने इस गढ़ का विरल ही प्रयोग किया । परन्तु 1534 में, जब हुमायूँ ने किले को घेर लिया तो माण्डू के तत्कालीन शासक बहादुरशाह को इसी गढ़ में शरण लेनी पड़ी । अन्ततः अपने घोड़ों सहित उसे यहाँ से भी, पहाड़ी के पश्चिमी प्रदेश के साथ वाली बहुत भंयकर तथा ढालू खड़ी चट्टान से रस्सियों द्वारा नीचे उतरकर भाग जाना पड़ा । इन खड़ी चट्टानों की भयंकर स्थिति पर ध्यान देने से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह वास्तव में युद्ध का सर्वाधिक उल्लेखनीय तथा साहसिक कार्य रहा होगा । अठारहवीं एवं उन्नीसवीं शताब्दियों में मराठा

शासन के दौरान इसके अन्दर पहाड़ी के शिखर पर मजबूत गढ़ी का निर्माण किया गया जिसके अवशेष अब भी दृष्टव्य हैं । घने जंगल द्वारा ढकी हुई इस पहाड़ी पर पहुँच पाना अति दु:साध्य कार्य है । जंगल के बीचोंबीच गारे का प्रयोग किये बिना शिलाखण्डों से निर्मित एक प्राचीन बन्द जलाशय है जो परमारों के प्रारम्भिक काल का है ।

## II. किले के भीतरी स्मारक

### प्राचीन स्मारक--लोहानी गुफायें तथा मन्दिरावशेष

माण्डू-दुर्ग में, शाही क्षेत्र के नज़दीक ही स्थित लोहानी गुफाओं के अतिरिक्त अब और कोई प्राचीन स्मारक विद्यमान नहीं है । साधारण उत्खनन-कार्य से बनी इन गुफाओं में अधिक नक्काशी का अभाव है और न ही इन पर कोई अभिलेख अंकित है जिसमें इसके निर्माण-काल अथवा परिस्थितियों का उल्लेख हो । इनके समीप ही अनेक हिन्दू शैली के ढांचों के अवशेष हैं जिनमें से कुछ अभिलेखयुक्त हैं । संभवतः इन गुफाओं का उत्खनन ईसा की ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी में हुआ था । यह आकार में कुछ शैल निर्मित कक्ष के समरूप हैं जिनका निर्माण, संभवत: शैव-योगियों अथवा योगिनों के निवास हेतु हुआ था । उनके सामने एक शैल-निर्मित कुण्ड है । इसके अहाते में किसी समय मलबा भरा पड़ा था जिसे हटाने पर लगभग 80 मूर्तियां अथवा उत्कीर्ण कृतियां प्राप्त हुईं, जो अब होशंग शाह के मकबरे के साथ संलग्न स्थानीय संग्रहालय में रखी हुई हैं ।

खोज करने पर इन गुफाओं के समूचे प्रतिवेश (पास-पड़ोस) में, हिन्दू मन्दिरावशेषों के रूप में कुछ उत्कीर्ण विखण्ड (टुकड़े) बिखरे हुए पाये गए, इनमें अधिकांश शैव-मन्दिर थे, जो किसी समय यहाँ विद्यमान थे जिन्हें संभवत: नष्ट करके उनकी सामग्री का मुस्लिम भवनों के

निर्माण में प्रयोग किया गया था । कुछ स्थानों पर इन मन्दिरों के मूल अधिष्ठान प्रकाश में लाये गए हैं । गुफाओं के दक्षिण की ओर अब भी एकाश्म का लगभग 5 मीटर ऊँचा एक स्तम्भ विद्यमान है जिससे, संभवत: किसी मन्दिर का अग्रभाग शोभायमान था । लालकोट-क्षेत्र में, चम्पा बावड़ी के निकट हिन्दू देवियों की मूर्तियां प्राप्त हुई । दिलावर खाँ की मस्जिद के निर्माण में विखण्डित हिन्दू मन्दिरों की सामग्री का प्रयोग किया गया । यह विश्वास किया जाता है कि हिण्डोला-महल की विशाल दीवारों के भीतर ऐसी सामग्री अत्यधिक मात्रा में गड़ी (जड़ी) हुई है, जोकि अब भी स्मारक के कई भग्न स्थानों से बाहर से दिखाई देती है ।

पहाड़ी के अन्य भागों से भी ऐसे ही मन्दिरावशेष प्राप्त हुए । रूपमती के मण्डप को जाने वाली सड़क के समीप ही, "सात कोठरी" नामक भवन के पीछे शैव-मन्दिर की कुर्सी, दुर्गा, शिव, लक्ष्मी-नारायण तथा नन्दी की मूर्तियां प्राप्त हुई हैं । नर्तकियों एवं संगीतकारों की मुद्राओं से उकेरी गई एक छत भी मिली है । यह अवशेष संभवत: ईसा की 12 वीं शताब्दी ई. के हैं । इसी प्रकार की मूर्तियां तथा उकेरे गए शिलापट्ट, सागर झील के समीप पंच पवलि नामक स्थल पर मिले । रेवा-कुण्ड के पास वाली सड़क के किनारे पर स्थित एक टीले पर भी शैव-प्रतिमाएं तथा परमार राजा भोज द्वितीय का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है । सोनगढ़ के अलग-थलग शिखर पर भी ऐसे अवशेष पाए गए हैं ।

यह सब बिखरी हुई प्राप्त वस्तुएं अब भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के स्थानीय संग्रह कक्ष में रखी हुई हैं । इनमें ईसा की दसवीं शताब्दी से लेकर पन्द्रहवीं शताब्दी तक के लगभग एक दर्जन अभिलेख भी सम्मिलित हैं । इस संग्रह का कुछ भाग सुल्तान होशंग शाह के मकबरे के साथ संलग्न धर्मशाला में रखा हुआ है । जिसमें उत्कीर्ण दीवारगीरें,

सरदल, तक्षित द्वार-चौखटों के टुकड़े, उत्कीर्ण स्तम्भों के अंश, मन्दिरों के लघु शिखर और किसी समय मन्दिरों को सुशोभित कर रहे आमलक आदि वास्तुखण्ड शामिल हैं । इनसे किले में परमार-मन्दिरों के विद्यमान होने का संकेत मिलता है । परवर्ती काल के जैन-मन्दिरों की कुछ संगमरमर की कृतियां भी इनमें सम्मिलित हैं । मलबा हटाते समय होशंग शाह के मकबरे, गदा शाह की दुकान, हिण्डोला-महल, त्रिपोलिया दरवाज़ा आदि स्मारकों में ऐसे अवशेष देखने में आये हैं ।

## III. मध्ययुगीन स्मारक

इस दुर्ग में लगभग 75 ऐतिहासिक भवन हैं, जो निम्नलिखित विभिन्न समूहों में स्थित हैं—

1. शाही क्षेत्र
2. माण्डू गाँव के आस-पास स्थित स्मारक
3. सागर-तालाब का भवन-समूह
4. रेवा-कुण्ड का भवन-समूह
5. सागर-तालाब तथा गाँव के मध्य में स्थित भवन-समूह और
6. विविध छुट-पुट स्मारक

पर्यटक इन समूहों को ध्यान में रखकर स्मारक की योजना बना सकता है । दिल्ली दरवाज़े के निकट स्थित किलें के प्रवेशद्वार से दर्शन-यात्रा प्रारम्भ करना अधिमान्य है ।

# (१) शाही क्षेत्र

## दिलावर खाँ की मस्जिद

मालवा के प्रथम मुस्लिम सुल्तान के शासन का उल्लेख करते हुए 1405 ई. के लगभग के एक अभिलेख से यह स्पष्ट होता है कि यह मस्जिद माण्डू में निर्मित प्राचीनतम् भारतीय–इस्लामी इमारत है । यह मस्जिद विशेष तौर से शाही परिवार के सदस्यों के लिये थी । इसमें चारों ओर से स्तम्भावली द्वारा परिबद्ध एक सेहन है । सेहन के उत्तर, पूर्व तथा दक्षिण की तरफ एक–एक पार्श्ववीथी तथा पश्चिम की तरफ चार पार्श्ववीथियाँ हैं । इसके स्तम्भ तथा भीतरी छतें हिन्दू शैली के हैं, जबकि पश्चिमी दीवार तथा मुख्यद्वार की ताखें प्रचुर मात्रा में अलंकृत हैं । इस भवन की वास्तुकला हिन्दु–शिल्प से बहुत प्रभावित है । यही विशेषता मालवा की प्राचीनतम् भारतीय–इस्लामी वास्तुकला में अक्सर पाई जाती है ।

## नाहर झरोखा

इस मस्जिद के पूर्व में एक चौक है जिसकी दक्षिणी सीमा पर नाहर झरोखा नाम से प्रसिद्ध छज्जे के अवशेष दिखाई पड़ते हैं । छज्जे का यह नाम इसके आधार हेतु बनी बाघ की प्रतिमा के कारण पड़ा । इसका निर्माण, स्पष्टतः राजा द्वारा अपनी प्रजा को दर्शन देने के प्रयोजन से हुआ । ऐतिहासिक दृष्टि से, राजा द्वारा अपनी प्रजा को दर्शन देने की प्रथा का चलन मुगल सम्राटों में अधिक पाया गया है । इसके पीछे स्थित भवन की निर्माण शैली को देखते हुए, सम्भवतः इसका निर्माण उस समय हुआ जब जहाँगीर माण्डू में ठहरा हुआ था । इसके अतिरिक्त यह भी स्मरणीय है कि ऐसे दर्शन–झरोखे दिल्ली तथा आगरे के किलों में भी पाये गए हैं । इन झरोखों से मुगल सम्राट प्रतिदिन सबेरे अपनी प्रजा को दर्शन दिया करते थे ।

## हाथी पोल

अपने दोनों पार्श्वों में टूटी हुई हाथियों की प्रतिमाओं के कारण हाथी-पोल नाम से प्रसिद्ध यह द्वार इस अहाते का मुख्य प्रवेशद्वार है। अधिकांश शानदार भवन इसी अहाते में स्थित हैं। हाथियों की प्रतिमाएँ आदमकद (प्राकृत आकार) से कुछ छोटी हैं तथा एकाश्मकों में ऐसी मूर्तियां उत्कीर्ण करने की हिन्दू-शैली के विपरीत हैं। यह मूर्तियां प्रस्तर खण्डों से निर्मित हैं और इन पर चूने का पलस्तर किया हुआ है पार्श्विक बुर्जों द्वारा सुदृढ़ इस प्रवेशद्वार में कुल मिला कर, परस्पर कुछ दूरी पर स्थित दो मेहराबें सन्तरियों के लिए संलग्न कक्ष और उनके बीच में एक आवृत मार्ग है। यह देखने में आया है कि वास्तुकला की दृष्टि से यह प्रवेश द्वार किले के अन्य प्रवेशद्वारों से भिन्न है। इसकी मेहराबों की निर्माण-शैली तथा तोपों के धारण हेतु बने बुर्जों को देखने से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है। यह बुर्ज इस द्वार की ऐसी विशेषता है जिसमें स्पष्टतयाः युद्ध में बारूद के प्रयोग की पूर्वकल्पना की गई है, जिससे माण्डू के प्रारम्भिक सुल्तान अनभिज्ञ थे। जहाँगीर काफी लम्बे समय तक माण्डू में रहा इसलिए, संभवतः इस द्वार का निर्माण जहाँगीर के अभियन्ताओं द्वारा किया गया।

## उजाला तथा अन्धेरी बावड़ियाँ

दो कूपों में से उजाला बावड़ी (अनावृत होने के कारण यह 'उजाले कूप' के नाम से प्रसिद्ध है जबकि दूसरा कूप आवृत है, इसलिए 'अन्धेरी बावड़ी' अथवा 'अन्धेरा कूप' कहलाता है) अधिक बड़ी तथा गहरी है। इसमें दोनों तरफ, जलस्तर तक एक-एक सोपान पंक्ति निर्मित है। इसके अन्दर जल-वाहकों की सुविधा हेतु कुछ तोरण-पथ (आच्छादित मार्ग) तथा चौड़ी सीढ़ियाँ बनी हैं। इसके उत्तरी किनारे पर एक रहट है और उसके सामने दक्षिणी किनारे पर, जल सुरक्षा हेतु शाही-पहरेदारों के लिए एक मण्डप बना हुआ है।

इसके निकट ही अन्धेरी बावड़ी है जिसके ऊपर चारों ओर गलियारा है । जिसकी छत के मध्य में, कूप के ठीक ऊपर एक गुम्बद है । गुम्बद के शिखर पर, प्रकाश तथा वायु के भीतर प्रवेश के लिए छेद बना हुआ है । कूप के किनारे पर बने गलियारे के नीचे उत्तम मेहराबदार दर्शक-दीर्घा (गैलरी) है जिसमें, ऊपर से चले आ रहे सोपान-युक्त मार्ग द्वारा पहुँचा जा सकता है । यह मार्ग और नीचे जल स्तर तक चला जाता है ।

## गदा शाह की दुकान और महल

शाही अहाते के अन्दर दो भवन हैं जिनका सम्बन्ध गदा शाह नामक व्यक्ति से है । इनमें से एक भवन को उसकी दुकान और दूसरे को उसका महल कहा जाता है । इन दोनों भवनों के अवशेष इतने प्रभावशाली हैं कि उनको देखकर उनके साधारण समझे जाने वाले स्वामी के नगण्य महत्व का व्यक्ति होने की बात कल्पनातीत हो जाती है । इन भवनों के शाही क्षेत्र के अन्दर स्थित होने से भी यह स्पष्ट होता है कि वह माण्डू में अपने समय का अत्यधिक महत्वपूर्ण तथा शक्तिशाली व्यक्ति था । गदा शाह का शब्दिक अर्थ है — भिक्षु-स्वामी जो कि स्पष्टतया: उपनाम है । उस समय के मालवा के इतिहास को देखते हुए यह उपनाम राजपूत सरदार मेदिनी राय का मानना ही अधिक उपयुक्त है । मेदिनी राय यद्यपि सुल्तान महमूद द्वितीय का राज-कर्मचारी था, वस्तुत: कुछ समय के लिए राज्य का स्वामी बन गया था ।

'दुकान' नाम से प्रसिद्ध भवन किसी समय संभवत: साधारण जनता के लिए दीवान-ए-आम था और पश्चिम की तरफ के हिण्डोला-महल में विशेष (गिनी-चुनी) सभायें होती थी । दोनों भवनों की समान निर्माण-शैली को देखकर इस तथ्य की पुष्टि होती है ।

इस समय विद्यमान भवन की संरचना अति विशाल है । इसका कक्ष आकार में बहुत बड़ा है और विशाल मेहराबों के भार को संभालने

के लिए भारी पुश्ते बनी हैं । दीवारों के साथ बनी इन पुश्तों के बावजूद भी यह भवन अब बहुत तरह से ध्वस्तावस्था में हैं । हिन्डोला–महल के प्राकृतिक प्रस्तर आवरण के विपरीत इस भवन की दीवारों को पलस्तर करके रंगीन टाइलों से सजाया गया था जिनके चिन्ह अब भी दृष्टव्य हैं ।

गदा शाह का 'मकान' दो–मंजिला भवन है जिसकी निचली मंजिल में मेहराबदार द्वार तथा पार्श्विक कक्ष हैं । ऊपर वाली मंजिल में एक कक्ष (बड़ा कमरा) तथा दो पार्श्विक कमरे हैं ।

कक्ष के बीचोंबीच एक फव्वारा था जिसका अनावश्यक पानी अनेक नालियों तथा हाथी और चीते के सिरों की आकृति में बनी टोंटियों द्वारा बाहर निकाला जाता था । संरचना की दृष्टि से यह इसकी हिन्दु विशेषता है जिससे इसके मेदिनी राय से सम्बन्धित होने के अनुमान की पुष्टि होती है । इसके अतिरिक्त, कक्ष के दक्षिण–पश्चिमी कोने में बनी ताख में दो सुन्दर चित्र हैं जिनमें एक सामन्त तथा एक महिला प्रदर्शित है । यह चित्र राजपूत सामन्त तथा उसकी पत्नी के हो सकते हैं । भवन के बाहर की दीवार पर सुसज्जित दिलहों तथा पलस्तर से बने अन्य नमूनों के चिन्ह विद्यमान हैं ।

## हिण्डोला-महल

हिण्डोला-महल (फलक 1) का शाब्दिक अर्थ है — झूलता हुआ महल । इसका यह नाम, इसकी विशेष रूप से ढालू पार्श्विक दीवारों के कारण रखा गया । सौन्दर्यपरक दृष्टि से निश्चय ही आकर्षक परन्तु वास्तुकला की दृष्टि से अपनी अत्यधिक सादा निर्माण-शैली के कारण यह भवन माण्डू में स्थित सभी भवनों में बिल्कुल अलग ही है ।

इस भवन की संरचना अंग्रेजी वर्णमाला के बड़े अक्षर 'टी' के आकार की है । इसमें एक मुख्य कक्ष तथा उत्तर में आड़ा प्रक्षेपण है जिसकी वाह्य चिनाई में हुए परिवर्तनों का निकट से अवलोकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि यह, संभवत: बाद में बनाया गया । कक्ष के दोनों

तरफ छ: मेहराबदार द्वार हैं जिनके ऊपर प्रकाश तथा वायु के भीतर प्रवेश के लिए गवाक्ष निर्मित हैं जो सुन्दर अलंकरण से भरे पड़े हैं । इस कक्ष की लम्बी–चौड़ी मेहराबदार छत अब विद्यमान नहीं है । परन्तु ऊँची–ऊँची मेहराबों की वह पंक्ति जिसके सहारे यह छत टिकी हुई थी अभी तक अक्षुण है । पार्श्विक दीवारों की मोटाई 2.7 मीटर है । विशाल तिरछी पुश्तों द्वारा इनको और अधिक मजबूत किया हुआ है । यह पुश्ते स्पष्टतया: उन ऊँची–ऊँची मेहराबों के दबाव को संभालने के प्रयोजन से बनाई गई थी जिनके सहारे पर, किसी समय ऊपर की विशाल छत टिकी हुई थी ।

टी के आकार का यह प्रक्षेपण बाद में, संभवत: सुल्तान के लिए पूरी तरह से सुरक्षित मार्ग बनाने के प्रयोजन से जोड़ा गया । इसके भीतरी भाग की संरचना पारक (क्रास) पर आधारित है । हाथी–चढ़ाओ नाम से प्रसिद्ध मुख्य-मार्ग शाही परिवार की महिलाओं के लिए पालकी में अथवा टट्टू या हाथी पर बैठकर ऊपर जाने के लिए बनी ढालू सोपानों वाली सोपान पंक्ति के साथ है । इसमें बड़ा कमरा है जिसके स्तम्भ तथा छत अब विद्यमान नहीं हैं । भवन के इस भाग की ईंट की दीवारें अन्य भागों के अनुरूप नहीं हैं जिनको देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि इस भाग में बाद में बहुत से परिवर्तन किये गये ।

इस भवन का बाह्य भाग उत्कीर्ण ढलाई के कार्य वाली एक-दो पट्टियों को छोड़कर, बाकी देखने में अत्यधिक सादा परन्तु मजबूत है । वस्तुत: यहाँ के वास्तुविद् अलंकरण का न्यूनतम् प्रयोग करके विशुद्धवादी हो गए प्रतीत होते हैं । थोड़ा–बहुत अलंकरण, मुख्यत: गवाक्षों पर की गई नक्काशी में मिलता है । अलंकरण का प्रयोग इतना कम हुआ है कि माण्डू में स्थित अन्य विशाल भवनों की अलंकरण योजना में सामान्यतया प्रयुक्त रंगीन टाइलों का इसमें नितान्त अभाव है । ऐसा प्रतीत होता है कि वास्तुकारों का उद्देश्य उस समय माण्डू में विद्यमान अन्य भवनों के

विपरीत एक भव्य तथा सादा होते हुए भी देखने में आलीशान भवन का निर्माण करना था जिसका सुल्तान के दरबार-ए-खास के रूप में प्रयोग हो सके । जैसा कि अब भी स्वीकार्य है, उन्हें अपने इस उद्देश्य में पूर्ण सफलता प्राप्त हुई । इसलिए वास्तुकला की दृष्टि से इस भवन का निर्माण-काल गयासुद्दीन के शासन का अन्तिम समय अर्थात् ईसा की पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्त में मानना चाहिए ।

## शाही-महल तथा चम्पा बावड़ी

मुञ्ज-तालाब के साथ, उत्तर की ओर भवनों के कुछ अवशेषों के इतने अस्तव्यस्त ढेर हैं कि अब उनकी मूल संरचना अथवा अभिन्यास के विषय में कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता । फिर भी उनके अवशेषों की भव्यता को देखते हुए इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि किसी समय ये भवन मालवा के सुल्तानों के लिए विहार स्थल थे जिनको, माण्डू के सभी विशाल भवनों में से प्रकृति तथा मानव के हाथों सर्वाधिक क्षति पहुँची । इन अवशेषों में ही अपने पानी की मधुर सुगन्ध के कारण चम्पा बावड़ी नाम से प्रसिद्ध कुएँ में से चम्पक फूल की सुगन्ध आती थी ।

नीचे, कुएँ के तल तक जाता हुआ एक अन्तर्भौमिक मार्ग आगे 'तहखाना' नाम से प्रसिद्ध मेहराबदार कक्षों की भूल-भूलैया से मिल जाता है । ये कक्ष मुञ्ज-तालाब के जल-स्तर के बराबर की ऊँचाई पर स्थित है । यह कुआँ अपने पश्चिमी किनारे पर स्थित मण्डप तक जाती हुई वीथी के द्वारा मुञ्ज-तालाब से जुड़ा हुआ है । तहखाने से नीचे, कुएँ के तल तक सीढ़ियाँ जाती हैं । कुएँ की दीवारों पर मेहराबदार ताखें बनी हैं । वायु तथा प्रकाश के भीतर प्रवेश हेतु यह कुआँ ऊपर से खुला है । इस प्रकार तहखाने का निर्माण इतनी विविधता से किया गया तथा इसको कुएँ और तालाब के किनारे पर स्थित मण्डप के साथ इतनी विलक्षणता से जोड़ा गया कि ग्रीष्म ऋतु में, अत्यधिक गर्म समय में भी

मण्डप से वीथी के द्वारा कक्षों में आती हुई मन्द-मन्द समीर के द्वारा इन कक्षों को सदा ठण्डा तथा आरामदेह बनाये रखा जाता था। यह हवा अन्त में कुएँ के ऊपर से बाहर निकल जाती थी। कुएँ से कुछ दूरी पर एक हम्माम स्थित है जिसकी छत में, प्रकाश के भीतर प्रवेश हेतु सितारेनुमा सुन्दर झरोखे बनाये गए थे। हम्माम से तालाब के पश्चिमी किनारे पर स्थित मण्डप के समीप पहुँचने के लिए महलों के अवशेषों के बीच में से होकर निकलना पड़ता है। इस समय विद्यमान इस भवन के अवशेषों में केवल मेहराबदार छतों वाले दो बड़े कक्ष ही दिखाई पड़ते हैं। इसके मुख्य अग्रभाग दिलहों तथा नीली और पीली टाइलों के फुल्लों और फलकों से सुसज्जित संगमरमर से बनाये गए थे। इन फलकों में से कुछ पर कूफी अभिलेख अंकित है।

## जहाज़-महल

अगले पृष्ठों में वर्णित विशाल मस्जिद तथा होंशग शाह और महमूद के मकबरे यदि माण्डू की निर्माण-कला के निरभ्र वैभव के निरूपक हैं तो जहाज़-महल (फलक 2) को इसका रोमांचक (कल्पना-प्रधान) सौन्दर्य तथा आनन्ददायक उल्लास का प्रतिबिम्बक कहा जा सकता है, जो कि भारत के मुस्लिम शासकों के राजसी जीवन की विशेषता रही है। मुञ्ज तथा कपूर-तालाबों के मध्य में उभरी हुई भूमि की तंग पट्टी पर स्थित इस महल का अग्रभाग 121.9 मीटर से कुछ कम है। इसकी चौड़ाई 15.2 मीटर तथा इसके मोहरे की चौड़ाई 9.7 मीटर है। इस महल का निर्माण इतने कलात्मक ढंग से हुआ कि यह इन तालाबों के बीच में स्थिर (लंगर डाले) जहाज़ का दृश्य प्रस्तुत करता है। इसलिए, लोक-कल्पना के आधार पर इसे 'जहाज़-महल' जैसा उपयुक्त प्रशंसात्मक नाम दिया गया है।

इस उपमा के पीछे जो काव्यात्मक कल्पना रही होगी, उसके महत्त्व को समझने अथवा उसका मूल्यांकन करने के लिए वर्षा ऋतु में

तवेली–महल के सर्वोच्च छज्जे के ऊपर से इसका अवलोकन करना चाहिये जब तालाब लबालब भरे होते हैं और सब तरफ प्रकृति पेड़–पौधों की हरियाली रूपी परिधान पहने होती है । निर्मल चाँदनी की नीरव आभा में, छत पर मनोहरतापूर्वक खड़े किये गए मण्डपों के छोटे–छोटे गुम्बदों तथा कंगूरों से युक्त इस भवन की छायाकृति अत्यधिक आनन्दप्रद तथा प्रभावशाली दृश्य प्रस्तुत करती है । सम्राट जहाँगीर के संस्मरणों में उल्लिखित यह बात सचमुच ही बहुत दिलचस्प है कि माण्डू में उसके (जहाँगीर के) वास के दौरान, अपने असाधारण सौन्दर्य के लिए विख्यात, उसकी प्रिय मलिका नूरजहाँ इस महल में रहा करती थी । इस महल में महत्वपूर्ण समारोहों का आयोजन किया जाता था जिनमें से किसी एक समारोह के विषय में सम्राट ने लिखा है 'यह अद्भुत सभा थी ।' गोधूली बेला में तालाब पर और भवन में चारों तरफ लालटेन तथा दीप जलाये गए और ऐसा प्रकाश किया गया जैसा संभवतः कहीं पर, कभी भी नहीं किया गया । पानी में लालटेनों तथा दीपों के प्रतिबिम्ब पड़ रहे थे जिससे ऐसा प्रतीत होता था मानो तालाब की पूरी की पूरी सतह अग्निक्षेत्र बन गई हो । बहुत अच्छा मनोरंजन हुआ तथा मद्यपों ने मद्य के असंयमित सेवन का आनन्द लूटा' । उपरोक्त वर्णन को पढ़कर इस भवन के मूल सौन्दर्य तथा इसमें परिवेलित जीवनानन्द का अनुमान लगाया जा सकता है ।

निचली मंजिल में तीन बड़े कक्ष हैं जिनके बीच में गलियारे हैं । बिलकुल किनारों पर कोठरियाँ और उत्तरी कक्ष के पीछे तीन तरफ से स्तम्भावली द्वारा घिरा एक सुन्दर कुण्ड भी है । प्रत्येक कक्ष के पीछे मुञ्ज–तालाब के ऊपर प्रक्षिप्त एक–एक मण्डप है, जिनमें से केन्द्रीय कक्ष के पीछे का मण्डप लम्बाई–चौड़ाई में अपेक्षाकृत बड़ा है, इसकी गुम्बदी छत नीली तथा पीली टाइलों की पट्टी से सुसज्जित है । अन्य मण्डप लम्बाई–चौड़ाई में इससे छोटे परन्तु पत्थर के रचनात्मक–कार्य से भरपूर हैं । इनके द्वार मेहराबदार हैं । जब यहाँ हरम की औरतें रहती थीं तब इन मेहराबदार द्वारों में परदे लगाये गए होंगे ।

भवन के दक्षिणी किनारे पर स्थित कक्ष में एक नाली है । ऐसा प्रतीत होता है कि भवन के दूसरे किनारे पर स्थित कुण्ड में इसी नाली के द्वारा जल पहुँचाया जाता था । कुण्ड की बनावट बहुत सुन्दर है । इसके ऊपरी किनारे से कुछ नीचे तैरने में असमर्थ लोगों की सुविधा के लिए एक मध्य-मंच बना है ।

गुम्बदों तथा कंगूरों की विविधता वाले मण्डपों द्वारा सुसज्जित इसकी विस्तृत छत ही दर्शन के लिए आनन्दप्रद दृश्य प्रस्तुत करती है । इस छत पर जाने के लिए लम्बी सोपान-पंक्ति निर्मित हैं । किनारों पर स्थित दो मण्डप लम्बाई-चौड़ाई में बहुत बड़े तथा तीन-तीन कक्षों में विभाजित हैं जिनमें से केन्द्रीय कक्ष की गुम्बदी छत अपने पार्श्विक कक्षों की सूचीस्तम्भीय (पिरामिडी) छतों से कुछ ऊँची हैं । छतों की विविधता के कारण उत्पन्न कलात्मक प्रभाव वास्तव में बहुत आकर्षक है ।

निचली मंजिल के पीछे की ओर केन्द्रीय मण्डप के ठीक ऊपर, छत पर, इससे मिलता-जुलता एक अन्य गुम्बदी मंडप है । इसके भीतर तथा बाहर, दोनों तरफ, नीले तथा पीले रंग की टाइलों को लगी पट्टियाँ तथा फूल-पत्तीदार अभिप्राय के नमूने बने हैं ।

सामने, छज्जे के आगे की तरफ प्रक्षेपित छोटी सी छतरी की छोटी सी पिरामिडी (सूचीस्तम्भीय) छत पर स्थित अन्य मण्डपों से बहुत सुखद वैषम्य प्रस्तुत करती है ।

दक्षिणी मण्डप के दक्षिण-पूर्वी कोने में एक रहट था जिसके द्वारा, छत के सामने बनी नाली से, उत्तरी किनारे पर स्थित खुले स्नानगृह में जल पहुँचता था । कुछ छोटा होते हुए भी यह स्नानघर, आकार की दृष्टि से निचली मंजिल के कुण्ड के सदृश है ।

यहाँ की जामी-मस्जिद तथा बड़े-बड़े मकबरों के स्वाभाविक प्रस्तर-आवरण के विपरीत इसकी दीवारों और छतों पर पलस्तर की मोटी

परत चढ़ी हुई है । सामने, भवन के सम्पूर्ण अग्रभाग के ऊपरी हिस्से में भी यही विशेषता दृष्टव्य है ।

सामने बने कपूर-तालाब के चारों ओर के किनारे पक्के बने हुए थे । इसके जल के बीच एक मण्डप था जिसके अब अवशेष ही मिलते हैं । किसी समय यह मण्डप तालाब के पश्चिमी किनारे से सेतु के द्वारा जुड़ा हुआ था । यह सेतु अब लुप्त हो चुका है । जहाज़-महल के सामने की तरफ एक जल-प्रपात के चिन्ह मिलते हैं । इस जल-प्रपात द्वारा पानी एक-दो जल-प्रपातों पर हलके-हलके छींटे डालकर सेतु के निकट बहता हुआ तालाब में पहुँचता था । दोनों तालाबों को जोड़ने वाला अन्तर्भौमिक मेहराबदार प्रपात अब भी विद्यमान है ।

## तवेली-महल

तवेली नाम तबेला का बिगड़ा हुआ रूप है जिसका शाब्दिक अर्थ है 'अश्वशाला' । इस प्रकार यह भवन 'अश्वशाला-खण्ड' अथवा भवन था क्योंकि इसकी निचली मंजिल का प्रयोग अश्वशालाओं के रूप में होता था । इसकी ऊपर वाली दोनों मंजिलों के कमरों का प्रयोग पहरेदारों के आवास हेतु होता था । दक्षिण की ओर से शाही क्षेत्र में प्रविष्ट होने के लिए, इस भवन के समीप एक प्रवेशद्वार दिखाई पड़ता है जिससे उपरोक्त तथ्य की पुष्टि सरलतापूर्वक हो जाती है । तवेली-महल की छत आस-पास के क्षेत्र तथा अवशेषों के सुन्दर दृश्य में सर्वाधिक आकर्षक है । इसी कारण से किसी समय इसको पर्यटन के लिए " विश्रामगृह" बना दिया गया था ।

# ( २ ) माण्डू गाँव के आस-पास स्थित स्मारक

## होशंग शाह का मकबरा

इस मकबरे में एक वर्गाकार द्वार-मण्डप से होकर प्रवेश किया जा सकता है । द्वार-मण्डप में तीन तरफ समानुपातिक तथा कलात्मक

मेहराबदार द्वार हैं जिनके ऊपर संगमरमर का गुम्बद है । द्वार-मण्डप का भीतरी भाग अनलंकृत है हाँ, नीली अलंकृत टाइलों से सुसज्जित छोटी-छोटी, उत्कीर्ण मेहराबों की एक पट्टी अवश्य है । गुम्बद के अण्ड के साथ बने उभार में उत्कीर्ण एक मुंडेर की अनुकृति तथा नीचे, चिनाई में काटकर बनाये गए सितारों की एक पट्टी से युक्त इसका (गुम्बद का) वाह्य भाग भी सादा है (फलक 3) ।

अन्दर द्वार-मण्डप के पीछे विस्तृत सेहन के केवल उत्तरी और दक्षिणी पार्श्वों में पत्थर का बना पक्का फर्श है । सेहन के मध्य में संगमरमर के वर्गाकार चबूतरे पर निर्मित होशंग शाह का मकबरा है । वैसे तो यह चबूतरा एक दम सादा है परन्तु बहिर्विष्ट पिण्डकों से युक्त, उत्कीर्ण किये हुए इसके किनारे अलंकृत हैं । इसकी यह विशेषता इस पर इसके निर्माण हेतु नियुक्त किये गए हिन्दू मूर्तिकारों के प्रभाव की द्योतक है ।

ऊपर उभार पर उत्कीर्ण, छोटी-छोटी अलंकृत मेहराबों की साफ सुथरी पट्टी से बने छज्जे के सहारे हेतु निर्मित गजदन्त की सी दीवारगीरों की एक पंक्ति से युक्त इसकी दीवारें चबूतरे से 9.6 मीटर ऊँची हैं । यद्यपि द्वारमण्डप का अग्रभाग उत्तर की ओर से तथापि इसका प्रवेश, दक्षिण की ओर से स्थित अत्युत्तम समानुपात में बने सादे परन्तु नयनाभिराम अलंकरण-युक्त द्वार से है । इस द्वार के अलंकरण में, द्वार पर दोनों तरफ तथा ऊपर किनारे-किनारे बने अधखिले कमल-पुष्पों की एक पट्टी एवं चाप-स्कंध के उभारों में उत्त्कीर्ण फुल्लिकाएँ चिनाई में जड़े गए नीले आकाचित सितारे समाविष्ट हैं । दोनों तरफ सुन्दर ज्यमितीय नमूनों की जालीदार दीवारों के कारण इनके कलात्मक प्रभाव में और भी वृद्धि हो गई है । मकबरे की गम्भीरता बनाये रखने के लिए हलके प्रकाश के भीतर प्रवेश हेतु अन्य दीवारों में भी ऐसा जालीदार कार्य किया गया है ।

इसका अभ्यन्तर 14.9 × 14.9 मीटर का वर्ग है जोकि कुछ ऊँचाई पर मेहराबों के सहारे अष्टकोणक बनाया गया है । इससे भी ऊपर सामान्यतया प्रयुक्त बगली डाटों के प्रयोग द्वारा इसको सोलह भुजाओं में परिवर्तित कर दिया गया है ताकि ऊपर के विशाल गुम्बद का सब तरफ बराबर भार पड़े । कुछ अलंकृत गढ़तों जैसे कि गुम्बद के किनारे-किनारे नीले आकाचन की पृष्ठ-भूमि वाली लघु मेहराबों को छोड़कर, अन्य दृष्टिकोणों से भीतरी भाग अनलंकृत है ।

होशंग शाह का मुख्य ताबूत, पश्चप्रवण (पीछे की ओर झुकी हुई) धारियों तथा ऊपरी सिरे पर हिन्दू ढंग से गढ़ी गई मेहराब-युक्त मंजूषा के रूप में उत्कीर्ण है । गुम्बद के नीचे अन्य कब्रें हैं जिनमें से केवल तीन संगमरमर की बनी हैं ।

दायें द्वार-पक्ष पर एक अभिलेख अंकित है जिसके अनुसार 1659 ई. में शाहजहाँ के चार वास्तुकार इस मकबरे के निर्माताओं के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिये यहाँ आये थे (स्मरण रहे कि इन वास्तुकारों में से एक उस्ताद हामिद था जिसका आगरे में स्थित ताज के निर्माण से निकट सम्बन्ध था) ।

चारों कोनों पर छोटे-छोटे एवं कुछ नोंकदार गुम्बदी कंगूरों द्वारा सुसज्जित यह गुम्बद बाहर से चौरस तथा विशाल है । गुम्बद की स्तूपिका के शीर्ष पर अर्द्धचन्द्र बना हुआ है । माण्डू में यह विशेषता सीधे मिसोपोटामिया अथवा ईरान से आयी प्रतीत होती है ।

मकबरे के पश्चिम की ओर एक स्तम्भावली है जिसमें स्तम्भों की तीन पंक्तियाँ हैं । यहाँ, दीवारगीरों तथा स्तम्भों की बनावट और सरदलों पर आधारित सपाट छत के विन्यास पर लक्षित हिन्दू स्थापत्य का प्रभाव बहुत दिलचस्प है । स्तम्भावली के पीछे एक लम्बा परन्तु तंग कक्ष है जिसकी सामान्य मुस्लिम शैली में बनी छत बाहर की स्तम्भावली की समतल छत के विपरीत लम्बी तथा गजपृष्ठाकृत है ।

## जामी-मस्जिद

माण्डू में विद्यमान सभी भवनों में जामी-मस्जिद सर्वाधिक शानदार भवन है । कहा जाता है कि इसके निर्माताओं ने दमिश्क की विशाल मस्जिद के नमूने पर इसका निर्माण किया था । इसका निर्माण-कार्य होशंग शाह ने प्रारम्भ किया तथा महमूद ख़िलजी ने 1454 ई. में पूरा किया । इस भवन के नक्शे में ऊँचाई व नमूने की बहुत बड़े पैमाने पर कल्पना की गई । इसका नक्शा 97.4 वर्गमीटर है जिसके पूर्वी अग्रभाग से बर्हिविष्ट एक विशाल (16.8 मीटर) गुम्बदी द्वार-मण्डप है जिस तक पहुँचने के लिए करीब-करीब 30 सीढ़ियों की एक शानदार सोपान-पंक्ति है । पूरी इमारत धरातल से लगभग 4.6 मीटर ऊँची कुर्सी पर बनी है । द्वारमण्डप से नीचे, दोनों ओर से कुर्सी के अग्रभाग को 1.8 मीटर के बरामदे का रूप दिया गया है जिसमें भीतर दर्शनार्थियों अथवा मस्जिद के कर्मचारियों के लिए बनी कुछ कोठरियों के द्वार मेहराबदार हैं । इसके भवन की सामान्य योजना का सही मूल्यांकन करने के लिए सामने स्थित अश्रफी-महल के ऊँचे चबूतरे पर खड़े होकर इसको निहारना चाहिए । यहीं से दिखाई देता है कि किस प्रकार कलात्मक ढंग से मेहराबदार द्वारों वाले नीचे के कमरों से यह विशाल कुर्सी छिपी हुई है जिसके मध्य में विशाल गुम्बदी मण्डप स्थित हैं । इसकी पृष्ठभूमि में इसी प्रकार के तीन बड़े गुम्बद हैं जिनके बीच का स्थान असंख्य लघु गुम्बदों से सुसज्जित है । इस दृश्य को देखकर एक निष्ठावान व्यक्ति अवश्य ही ईश्वर के समक्ष अपने आप को तुच्छ अनुभव करेगा । इसके आकार की विशालता तथा इसकी बनावट में अत्यधिक सादगी को देखकर दर्शक बहुत प्रभावित होता है । रंगीन टाइलों से सन्निविष्ट, अलंकृत मेहराबों के सामान्य किनारों के सिवाय इसमें सजावट का प्राय: अभाव है (फलक 4) ।

द्वारमण्डप के द्वार में उत्तम अलंकरण-युक्त संगमरमर के सरदल

तथा द्वारशाखा है । अलंकरण के विषय को छोड़ दें तो यह द्वार हिन्दू इमारतों के द्वारों जैसा है । इसके भीतर लगभग 13.7 वर्गमीटर का लम्बा चौड़ा कमरा है जिसकी सुन्दर जालीदार दीवारों में जालियों के ऊपर सितारों अथवा हीरों के रूप में जड़ी हुई नीली आकाचन की टाइलों की सुन्दर धारियाँ दिखाई देती हैं । द्वारमण्डप के पश्चिमी द्वार के पार मस्जिद का खुला सेहन है जो हर तरफ से ऐसी विशाल स्तम्भावलियों द्वारा परिबद्ध है जिनकी मेहराबों, स्तम्भों, आलों तथा ऊपर के गुम्बदों की व्यवस्था में प्रचुर एवं रूचिकर विविधता है ।

इनमें पश्चिमी स्तम्भावली अथवा लिवान (प्रार्थना कक्ष) सर्वाधिक प्रभावशाली है जिसके ऊपर, छोटे-छोटे अट्ठावन गुम्बदों तथा बड़ी शान से इनसे ऊँचे उठे हुए तीन बड़े गुम्बदों से युक्त गुम्बदी छतों को सहारा देती हुई मेहराबों तथा स्तम्भों की बहुसंख्यक पंक्तियाँ हैं । यहाँ, अत्यधिक सादे स्तम्भों तथा मेहराबों के बीच जाकर व्यक्ति खो सा जाता है । भीतर की अत्यधिक सादगी तथा पश्चिमी दीवार पर बने उन सत्रह आलों में बहुत प्रभावकारी वैषम्य है जिनके शीर्षों पर सुन्दर, तक्षित मोखे बने हुए हैं । चमकदार काले पत्थर से निर्मित इन आलों के पाखे हिन्दू अभिप्रायों से अलंकृत हैं । बीच की मेहराब की बनावट तो सबसे सुन्दर है । इसके दोनों तरफ, अन्तर्गुम्फित अरबी अक्षरों की सूची में पवित्र कुरान के उद्धरण बनाकर इसे और अधिक अलंकृत किया गया है । इसके निकट ऊँचा मिम्बर (उपदेशासन) है, जिसका संगमरमर का बना सुन्दर गुम्बद चार मेहराबों पर टिका हुआ है । इसकी दीवारगीरें एवं जंगले में हिन्दू प्रभाव के स्पष्ट चिन्ह दृष्टिगोचर होते हैं । इस स्तम्भावली के ठीक ऊपर महिलाओं और राजकीय अतिथियों के लिए कक्षों की व्यवस्था की गई है ।

उत्तरी तथा दक्षिणी स्तम्भावलियों में ग्यारह मेहराबदार द्वार हैं जिनके ऊपर बने छज्जे के सहारे हेतु बनी उत्कीर्ण दीवारगीरों की पंक्तियाँ हैं । भवन के उत्तर की ओर दो प्रवेशद्वार हैं : एक सेहन में तथा दूसरा लिवान में खुलता है । दूसरा गुम्बदी द्वार सम्राट के लिए था ।

## मदरसा अथवा अश्रफी-महल

विशाल मस्जिद के पूर्व की ओर सामने एक चबूतरा है जिसे देखकर यह प्रतीत होता है कि किसी समय इसके ऊपर एक भव्य भवन बना हुआ था (फलक 5) । अब उस भवन के केवल अवशेष विद्यमान हैं । यहाँ के भवन निर्माण के दो भिन्न अवस्थानों में निर्मित हुए । पहले अवस्थान में बना, सामने की विशाल जामी-मस्जिद से जुड़ा हुआ भवन, मदरसे जैसा है । इसका नक्शा और नमूना जामी-मस्जिद के आधार पर बनाया गया क्योंकि वर्तमान अवशेषों को देखकर ऐसे संकेत मिलते है कि इस मदरसे के विशाल चतुष्कोण के रूप में आयोजन किया गया । इसमें विशाल मस्जिद की ही भाँति लम्बा-चौड़ा खुला सेहन है । सेहन के सब तरफ विद्यार्थियों के लिए कुछ छोटे-छोटे कमरे बने हुए हैं । इसके बाहर की ओर मेहराबों की दो पंक्तियाँ थी इनमें से भीतरी मेहराबों से होकर कमरों तक रास्ता जाता था । चतुष्कोण में पश्चिम की तरफ विशाल मस्जिद के द्वारमण्डप के सामने एक प्रक्षेपण था और लगभग इसके बराबर के माप अर्थात् 10.7 वर्गमीटर का ही था । मुख्य भवन की ही भाँति किनारों के साथ-साथ इसके कमरे तथा दोहरी मेहराबों की पंक्तियाँ बनी हुई थी । भवन को मुख्य मोहरा (अग्रभाग) प्रदान करने के उद्देश्य से इस प्रक्षेपण का 9.1 मीटर के लगभग और विस्तार किया गया । परन्तु इसकी अधिरचना (परिवर्धित भाग) अब विद्यमान नहीं है । चतुष्कोण के चारों कोनों पर गोल मीनारें बनी थी जिनमें से तीन के चिन्ह तो अब भी विद्यमान हैं ।

## महमूद खिलजी का मकबरा

मदरसे के निर्माण के पश्चात् शीघ्र ही महमूद खिलजी ने इसमें परिवर्तन किये । मेवाड़ के राणा पर पाई गई उसकी विजय के उपलक्ष्य में स्मारक स्वरूप उत्तर-पूर्वी मीनार को सात मंजिलें विजय-स्तम्भ का रूप दिया गया । अब इसका केवल नीचे का भाग विद्यमान है जिसकी

9.8 मीटर की ऊँचाई को देखकर यह आभास होता है कि अक्षुणावस्था में इसकी ऊँचाई बहुत अधिक रही होगी । महमूद ने चतुष्कोण के विस्तृत सेहन को अपने ही मकबरे का आधार तल बनाने के लिए उसमें और निर्माण करवाया । मूल चतुष्कोण के पश्चिमी प्रक्षेपण की छत पर सुन्दर गुम्बदी द्वारमण्डप बनवाया गया जिस तक पहुँचने के लिए चौड़ी-चौड़ी सीढ़ियाँ बनी हुई थी । यही मकबरे का प्रवेश द्वार था, इसके अवशेष अब भी विद्यमान हैं । मकबरे के बहुत कम अवशेष बचे हैं । परन्तु विद्यमान अवशेषों को देखने से स्पष्ट विदित होता है कि यह, माण्डू में स्थित सभी भवनों में सर्वाधिक शानदार मकबरा रहा होगा । इस भवन का गुम्बद समानुपात में, विशाल मस्जिद तथा होशंग शाह के मकबरे के गुम्बद से बहुत बड़ा रहा होगा क्योंकि इस भवन का अभ्यन्तर जिस पर यह गुम्बद आश्रित है 19.9 वर्गमीटर का है जबकि विशाल मस्जिद तथा होशंग शाह के मकबरे के अभ्यन्तर क्रमशः 13.7 मीटर तथा 14.9 मीटर के हैं । उसकी दीवारों तथा नींव की 3.4 मीटर की मोटाई इतने बड़े गुम्बद का भार वहन करने के लिए अपर्याप्त प्रतीत होती है । इसी कारण से यह भवन निर्माण के कुछ ही पीढ़ियों के पश्चात् धराशायी हो गया । इस भवन की दशा पहले, अकबर के समय में ही बहुत खराब हो चुकी थी । अकबर के अभियन्ताओं ने, कुछ अकलात्मक ढंग से ही सही, इसके सफेद संगमरमर में लाल पत्थर के टुकड़े लगाकर इसकी मरम्मत की ।

मकबरे के हर तरफ तीन-तीन प्रवेश द्वार थे जिनमें बीच का द्वार सब द्वारों से ऊँचा था । इसकी दीवारें अत्युत्तम उत्कीर्ण अभिप्रायों तथा सुलेखन के नमूनों से अलंकृत थीं । ऐसा प्रतीत होता है कि इसके लिए खास फारसी कलाकार नियुक्त किये गए होंगे । ताबूत सुन्दर ढंग से उत्कीर्ण पीले संगमरमर की पीढ़ा अथवा पीठिका पर रखा था जो, अब भी विद्यमान है । इस विशाल भवन पर सब तरफ सफेद, पीले, काले आदि विभिन्न रंगों का संगमरमर लगा हुआ था जिससे इस भवन में,

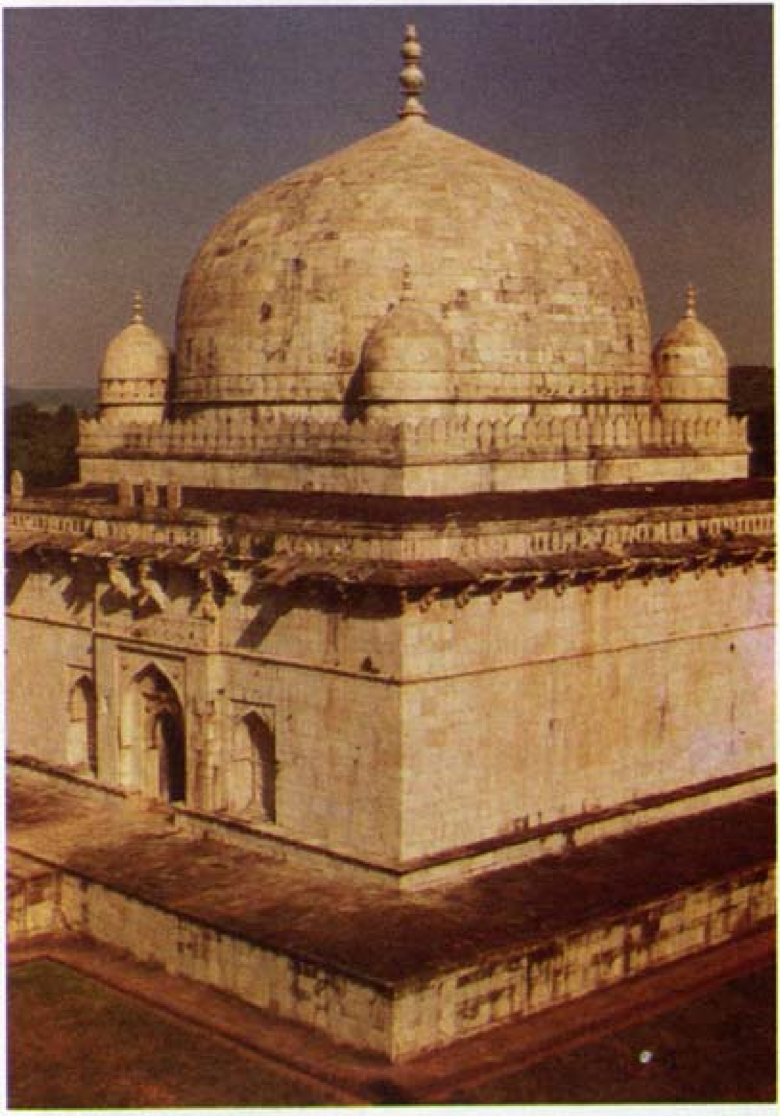


हिण्डोला-महल का आंशिक दृश्य देखें पृष्ठ-30

फलक - 2

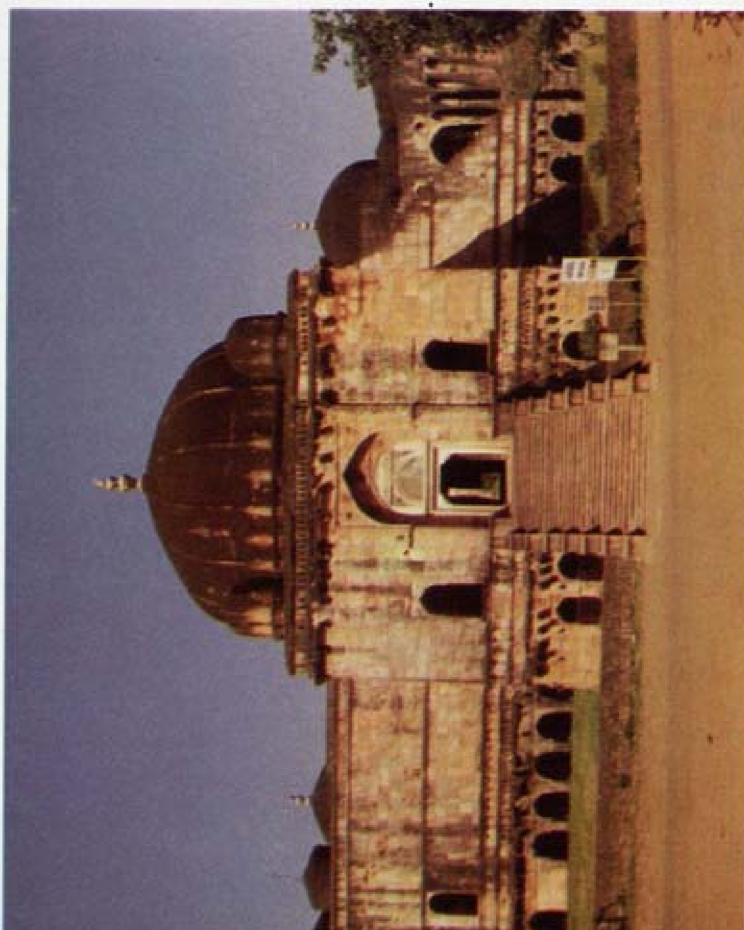


जहाज़-महल   देखें पृष्ठ-33

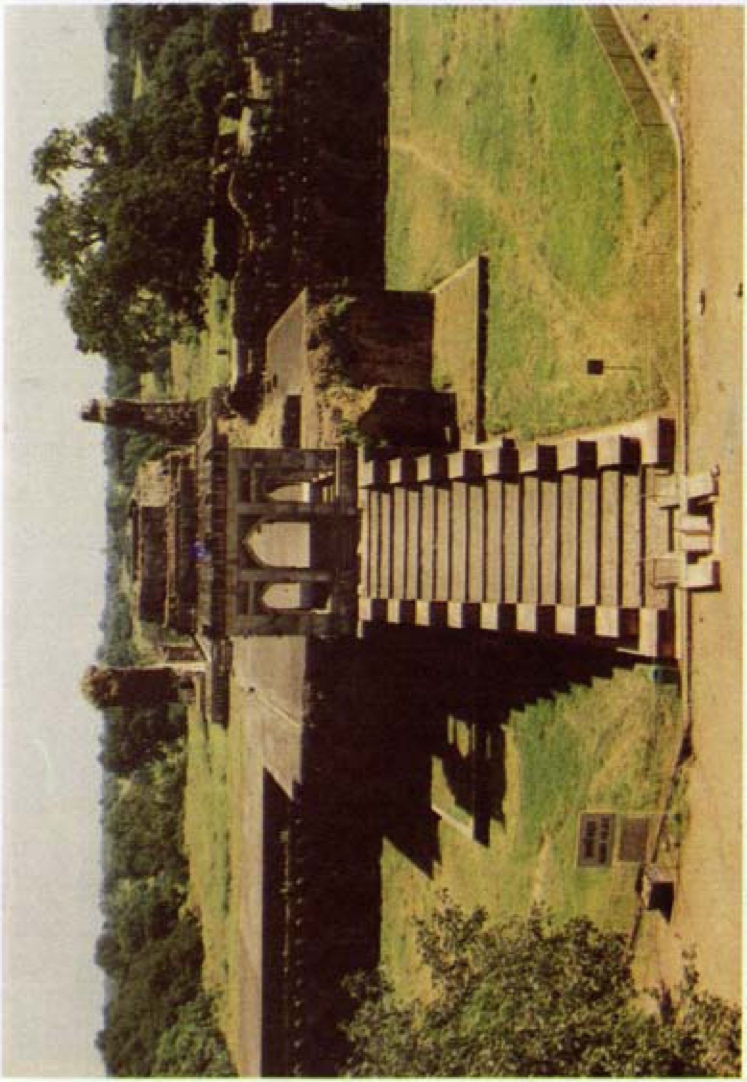


होशंग शाह का मकबरा देखें पृष्ठ-37

फलक - 4

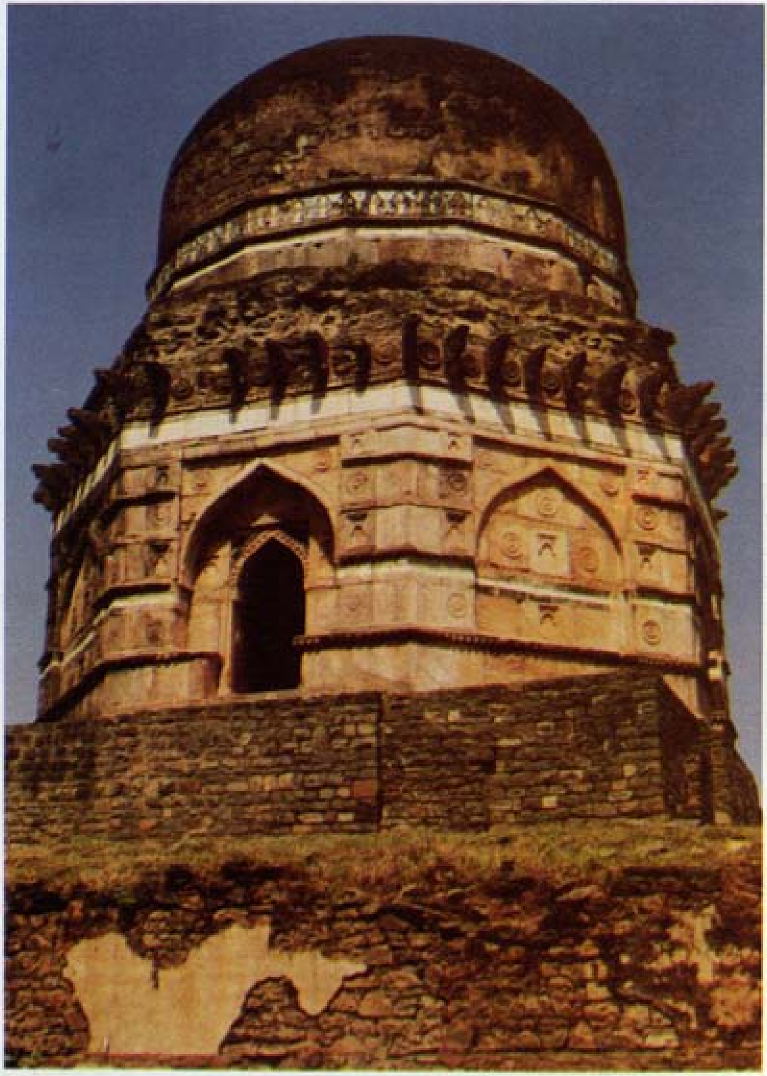


जामी-मस्जिद का विहंगम दृश्य देखें पृष्ठ-39



अशर्फी-महल देखें पृष्ठ-41

फलक - 6

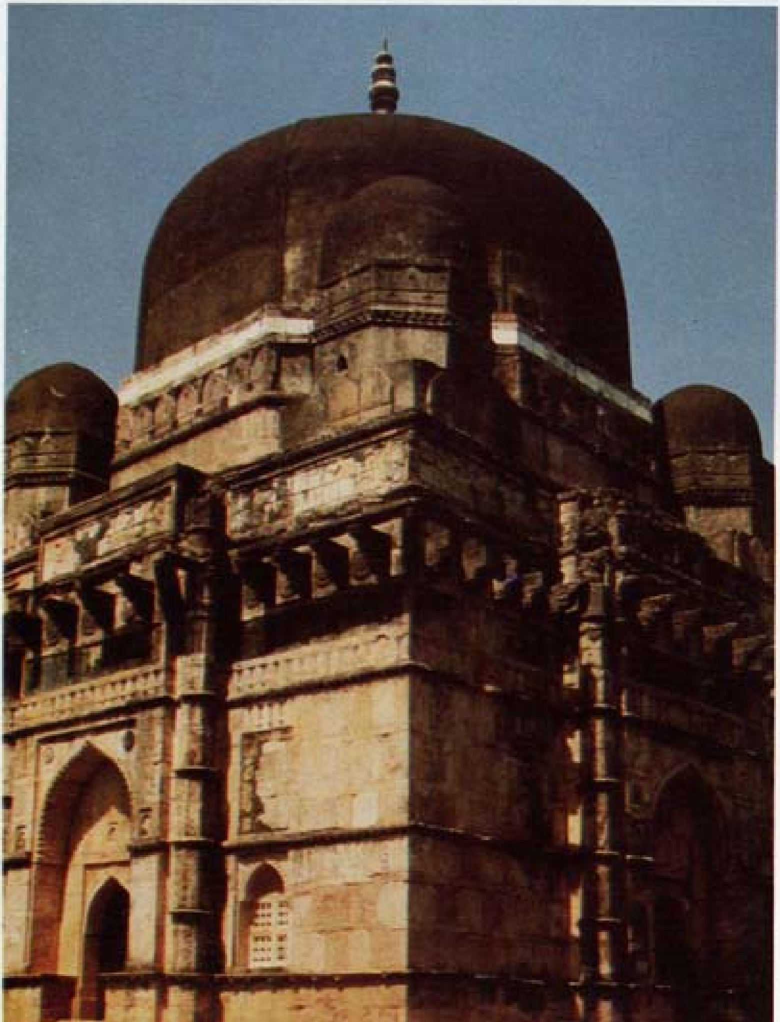


दाई की छोटी बहन का महल देखें पृष्ठ-44



रूपमती का मण्डप देखें पृष्ठ-48

फलक - 8



दरिया खाँ का मकबरा देखें पृष्ठ-50

विशेषकर इसके अलंकरण की विभिन्न पद्धतियों में और अधिक आकर्षण उत्पन्न हुआ । यह बहुत दिलचस्प प्रतीत होता है कि जामी-मस्जिद के दो विशाल गुम्बद (एक द्वारमण्डप के ऊपर तथा दूसरे इसके लिवान के मध्य भाग के ऊपर) और होशंग शाह के मकबरे का संगमरमर का गुम्बद इस मकबरे के विशाल गुम्बद की सीध में रहे होंगे । इसका गुम्बद उक्त गुम्बदों से 7.6 मीटर ऊँचा था । जब इन सब भवनों का निर्माण हुआ होगा तब संभवतः यहाँ का दृश्य बहुत ही शानदार रहा होगा ।

## ( ३ ) सागर-तालाब का भवन-समूह

### मलिक मुघीस की मस्जिद

सुरम्य सागर-तालाब के आस-पास निर्मित स्मारकों के बड़े समूह में सर्वाधिक प्रभावशाली स्मारक यह मस्जिद है जिसका निर्माण, इसके द्वार पर अंकित एक अभिलेख के अनुसार 1432 ई. में, महमूद ख़िलजी के पिता मलिक मुघीस ने करवाया । दिलावर खाँ की मस्जिद की भाँति इस भवन में भी स्तम्भावलियों द्वारा परिबद्ध (घिरा) केन्द्रीय सेहन है । इसके मुख्य द्वारमण्डप प्रक्षेपित तथा ऊँचे है जिसमें दोनों तरफ तहखाने में बने कुछ कक्ष हैं जो, स्पष्टतया: मस्जिद के कर्मचारियों तथा तीर्थयात्रियों के लिए रहे होगें । कक्षों के सामने सुन्दर ढंग से निर्मित मेहराबदार गलियारा है । मध्य में प्रक्षेपित द्वारमण्डप तथा कोनों पर छोटे-छोटे कंगूरों वाले इस गलियारे के कारण भवन का अग्रभाग और अधिक प्रभावोत्पादक हो गया है । किसी समय, इस द्वारमण्डप के ऊपर गुम्बद था, जो अब लुप्त हो चुका है । परन्तु पूर्वकालीन किसी हिन्दू मन्दिर के हिन्दू शैली के बने वे स्तम्भ जिन पर यह गुम्बद आधारित था, अब भी विद्यमान है । गुम्बद के गोल किनारे के उपयुक्त आधार हेतु कोनों के आरपार मेहराबों का निर्माण किया गया जिससे नीचे का वर्ग ऊपर जाकर अष्टकोणक बन गया है । इससे द्वारमण्डप की सामान्य बनावट में एक तरह की असंगति

उत्पन्न हो गई है । सेहन के चारों ओर की स्तम्भावली के संघटन हेतु लगे संभवतः पूर्वकालीन हिन्दू मन्दिरावशेषों से प्राप्त किये गए असंख्य उत्कीर्ण स्तम्भों के कारण इसके अभ्यन्तर में भी ऐसा ही प्रभाव दृष्टव्य है । पश्चिमी स्तम्भावली की छत पर तीन छोटे गुम्बद हैं जिनके बीच में सपाट अथवा सितारे-नुमा खाने हैं । गुम्बदों के ठीक नीचे वर्गाकार कक्ष है । इसकी पश्चिमी दीवार में सूक्ष्मता से उत्कीर्ण कुछ ताखें हैं जिनकी मेहराबें भी नीली टाइलों तथा फूलपत्तीदार नमूनों से सुसज्जित हैं ।

## कारवाँ-सराय

मस्जिद के सामने कारवाँ सराय नाम से प्रसिद्ध एक बड़ी सराय है जो संभवतः मस्जिद से जुड़ी हुई थी । इसलिए इसका निर्माण भी मस्जिद के निर्माण के समय हुआ होगा । इसके नक्शे में बीचोंबीच एक विस्तृत तथा खुला सेहन है जो हर तरफ से मेहराबदार छतों वाले बड़े कमरों के युग्मों तथा दोनों सिरों पर बने कक्षों द्वारा परिबद्ध है । इन कमरों का प्रयोग गोदाम के रूप में तथा कक्षों का प्रयोग आवास हेतु होता था ।

## दाई की छोटी बहन का महल (अथवा गुम्बद)

सराय के दक्षिण की ओर स्थित यह भवन माण्डू के किसी राजकुमार की दाई से संबन्धित किसी महिला से सम्बद्ध है । यद्यपि इस भवन को महल कहा जाता है परन्तु वास्तव में यह एक मकबरा है । संभव है कि पहले यह भवन उस महिला का घर रहा हो और बाद में इसी में उसको दफना दिया गया हो । (मुसलमानों में अकसर ऐसा होता रहा है) । यह भवन ऊँचे उठे हुए दोहरे चबूतरे पर बना है । सुन्दर प्राकृतिक दृश्य के मध्य में स्थित यह मकबरा ऊपर से देखने से अधिक सुन्दर लगता है (फलक 6) ।

इस मकबरे की संरचना अष्टकोणक है जिसमें चारों मुख्य दिशाओं की ओर मेहराबदार द्वार है । शेष चारों तरफ मेहराबों की केवल

बहिर्रेखायें बनाकर अलंकरण किया हुआ है । इसकी वाह्य दीवारों की सतहें चिनाई की बहिर्विष्ट पट्टियों द्वारा खण्डों (चौखटों) में विभाजित है । यह विशेषता, माण्डू के पूर्वकालीन भवनों में नहीं पाई जाती है और स्पष्टतया: इस पर हिन्दू-शिल्प का प्रभाव प्रदर्शित करती है । भवन के शीर्ष को सुशोभित करते हुए, इस सुन्दर गुम्बद के बाहर किये गये नीले रंग की टाइलों के अलंकरण कार्य के चिन्ह अब भी मिलते हैं । इसका अभ्यान्तर उत्कीर्णन द्वारा, बेशक अल्पमात्रा में ही सही, सुरुचिपूर्ण ढंग से अलंकृत किया गया है ।

इस मकबरे के पास ही दक्षिण की ओर स्थित सुन्दर उद्यान तथा मण्डप, जिसमें कुण्ड तथा झरनों के चिन्ह मिलें हैं अधिकांशत:, मुगल शैली के अनुरूप बने हैं । इसलिए इनके विन्यास का श्रेय मुगलों को ही देना चाहिए ।

## दाई का महल (अथवा गुम्बद)

यह महल, जिसे मकबरा कहना अधिक उपयुक्त होगा, एक ऊँचे चबूतरें पर स्थित है । इसके पश्चिम की तरफ कक्षों में मेहराबदार द्वार हैं । इसके दक्षिण-पूर्वी कोनों पर निर्मित गोल मीनारों के चिन्ह मिले हैं । इन कोनों पर किसी समय, मकबरे के फर्श के बराबर ऊँचाई पर सुन्दर मण्डप बने हुए थे । ऊँचे चबूतरे के मध्य में मकबरा बना हुआ है और इसके पश्चिमी किनारे के साथ एक सुन्दर मस्जिद के अवशेष स्थित हैं । इस मस्जिद में दोहरा कक्ष है जिसकी मेहराबदार छत पर टाइलों से किये गए अलंकरण के चिन्ह विद्यमान हैं । दक्षिणी तथा उत्तरी दीवारों में से बर्हिर्विष्ट जंगलों तथा उनके सहारे हेतु बनी गज-दन्त नुमा दीवारगीरों में, हिन्दू शैली का प्रभाव प्रकट करती हुई खिड़कियाँ विशेष रूप से दर्शनीय हैं ।

खास मकबरा वर्गाकार है । इसकी दीवारों के मध्य में मेहराबदार द्वार हैं । दीवारों का ऊपरी भाग छोटी-छोटी मेहराबों की पंक्तियों से

अलंकृत है । इस भवन की सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता गुम्बद की लम्बी अष्टकोणक ग्रीवा है, जोकि इस अष्टकोणक के कोनों पर बनी छोटी-छोटी छतरियों से अलंकृत मुंडेरों द्वारा घिरी हुई है । माण्डू में यह विशेषता विरले ही पाई जाती है । जबकि दक्कन में, गुम्बदों में अलंकरण की यह सामान्य पद्धति है ।

### जाली-महल

सड़क पर प्रतिध्वनित-स्थल (जहाँ नीचे गहरी तथा वृक्षावृत घाटियों के कारण मृदु गूँज सुनाई पड़ती है) को पार करने के बाद लगभग 200 मीटर की दूरी पर सड़क पूर्व की ओर मुड़ती है । यहाँ से, सागर-तालाब के उत्तर की तरफ, पहाड़ी पर बना 'जाली-महल' नाम से प्रसिद्ध बहुत बढ़िया गुम्बदी भवन दिखाई पड़ता है । यह वास्तव में किसी उमराव का मकबरा है वर्गाकार नक्शे वाले इस भवन के हर तरफ तीन-तीन मेहराबदार द्वार हैं । दक्षिण की ओर स्थित द्वार को छोड़कर शेष सभी को मुस्लिम शैली के ज्यमितीय नमूनों में उत्कीर्ण दीवारें बनी हैं यद्यपि यहाँ कोई भी जालीदार दीवार नहीं है तो भी इसे जाली-महल कहे जाने का कारण, स्पष्टतया: इसकी उपरोक्त उत्कीर्ण दीवारें ही हैं ।

## (४) रेवा-कुण्ड का भवन-समूह

### रेवा-कुण्ड

अंशत: हिन्दुओं के लिए रेवा-कुण्ड के जल की पावनता तथा अंशत: बाज़ बहादुर तथा रूपमती के नामों से सम्बद्ध होने के कारण मुञ्ज-तालाब की ही भाँति इस कुण्ड का प्रारम्भिक हिन्दू नाम ही आज तक प्रचलित रहा है । बाज़ बहादुर तथा रूपमती के द्वारा इसका विस्तार तथा पुनर्निर्माण किया गया जान पड़ता है ।

यह कुण्ड चिनाई से आस्तरित (पक्का किया हुआ) है । इसमें नीचे, जल-तल तक सीढ़ियाँ जाती हैं । इसके उत्तरी-पश्चिमी किनारे के ऊपर मेहराबदार द्वारों वाले कुछ कक्ष बने हैं जो उन विहार-स्थलों

का एक भाग है जो किसी समय यहाँ, तालाब के स्वच्छ जल के सामने स्थित थे । इनमें विभिन्न कालों में कुछ परिवर्द्धन किये गए प्रतीत होते हैं जिसके कारण इसके स्तम्भों तथा मेहराबों में विविधता के दर्शन होते हैं । कुण्ड के उत्तरी किनारे पर बाज़ बहादुर के महल को जल प्रदान करने के लिए एक रहट था ।

## बाज़ बहादुर का महल

नयनाभिराम प्राकृतिक दृश्य में मध्य में एक पहाड़ी ढलान पर स्थित इस महल के मुख्य द्वार तक पहुँचने के लिए चालीस चौड़ी सीढ़ियाँ हैं । मुख्य द्वार में से होकर जाता रास्ता दोनों ओर के सन्तरियों के लिए बने कक्षों तथा ऊपर की मेहराबी छत द्वारा आवृत है । इसके प्रवेश-द्वार मेहराबदार हैं । आगे चलकर यह रास्ता महल के बाह्य प्रांगण तक जाता है । प्रांगण का मुख्य प्रवेशद्वार सामने है । महल के मुख्य भाग में बड़ा प्रांगण है जिसमें चारों ओर बड़े और छोटे कमरे तथा मध्य में एक सुन्दर कुण्ड बना हुआ है । उत्तर की ओर, स्तम्भावली के उस पार प्रांगण के बीचोंबीच, नीचे की गहराइयों में झाँकता हुआ मेहराबदार द्वारों वाला एक अष्टकोणीय मण्डप प्रक्षेपित है । नीचे की इन गहराइयों में किसी समय, एक सुन्दर उद्यान लगाया गया था, जिसके चिन्ह अब भी दिखाई देते हैं । प्रांगण के पूर्व तथा पश्चिम दोनों ओर का नक्शा लगभग समान है अर्थात दोनों तरफ सिरों पर वर्गाकार कक्ष हैं । पश्चिम की तरफ मध्य में प्रवेश द्वार है जबकि पूर्व की ओर का यही अर्थात् इसके सामने का स्थान खुला छोड़ दिया गया है जिसका उद्देश्य स्पष्ट नहीं है । दक्षिणी दिशा में एक कक्ष है जिसके दोनों ओर कमरे बने हैं । इसके द्वार पीछे एक अन्य कक्ष में निकलते हैं । पीछे वाले इस कक्ष में से होकर दक्षिण की ओर स्थित एक अन्य प्रांगण में रास्ता निकलता है, जोकि पहले प्रांगण से बहुत छोटा है । इसका निर्माण संभवतः महल के परिचरों के प्रयोगार्थ हुआ था । पहले प्रांगण की ही भाँति यह भी छोटे तथा बड़े कक्षों द्वारा घिरा हुआ है । परिचरों के प्रांगण को मुख्य भवन से पृथक् करती हुई,

दीवारों में बनी सोपान पंक्तियाँ ऊपर की बड़ी छत तक जाती है छत पर दो सुन्दर बारादरियाँ हैं जिनमें खड़े होकर आसपास के प्रदेश के मोहक दृश्य का आनन्द लिया जा सकता है । मुख्य प्रवेशद्वार पर फारसी में एक अभिलेख अंकित है जिसके अनुसार सुल्तान नासिर शाह ने 914 हि. (1508-9 ई.) में इसका निर्माण करवाया ।

## रूपमती का मण्डप

दक्षिण की ओर बाज़ बहादुर के महल के उस पार (पीछे), पहाड़ी के ऊँचे शिखर पर प्रणयिनी रूपमती से सम्बद्ध एक महल स्थित है । इस भवन (फलक 7) का सूक्ष्म परीक्षण करने पर यह प्रकट होता है कि यह विभिन्न कालों में निर्माण के दो अथवा तीन चरणों से गुज़रा है । अर्थात् इसका निर्माण दो अथवा तीन चरणों में, अलग-अलग समय में हुआ । पूर्व की ओर से स्पष्ट दिखाई देगा कि मूल इमारत में कुछ नीचे स्थित बड़ा कक्ष था जिस के दोनों ओर दो कमरे थे । दीवारें, नीचे तल की ओर बहुत ढालू हैं और मेहराबें अपने फैलाव के अनुपात में कुछ भारी हैं । दीवारों के ऊपर की मुंडेर भी मूल संरचना का ही अंग है । इस प्रकार ऊपर वाले मण्डपों को छोड़कर इस भवन का यह भाग प्रथम अवस्थान में बना और मूलतः, इस भाग का निर्माण किले के इस तरफ से, शत्रु की किसी भी प्रकार की संभव गतिविधियों पर कड़ी सैन्य दृष्टि रखने के उद्देश्य से किया गया प्रतीत होता है । इस तरफ नीचे, किले की पहाड़ी-ढलान 365.8 मीटर है जहाँ से स्पष्ट रूप से निमाड़ का मैदान दिखाई देता है ।

इस भवन के शेष भाग का निर्माण पहाड़ी की ढलान पर बने मूल खण्ड की कुर्सी के पश्चिमी किनारे के साथ निचली मंजिल के रूप में किया गया जिसमें गलियारों के रूप में दो और परिवर्द्धित प्रक्षेपण हैं जिनमें से एक पश्चिम की ओर तथा दूसरा उसकी विपरीत दिशा में, खण्ड के उत्तरी किनारे के साथ, पूर्व की तरफ चला जाता है । निचली

मंजिल के गलियारों में, इनकी चौड़ाई (विस्तृति) के आर–पार, छतों के सहारे हेतु मेहराबदार द्वार बनें हैं। पश्चिमी प्रक्षेपक में एक बड़ा कुण्ड भी है जिसमें छत के नीचे की ओर कुण्ड तक जाती हुई नालियों द्वारा मानसून के आने पर केवल वर्षा का पानी ही पहुँचाया जा सकता था।

वस्तुतः इस भवन के मूल खण्ड की छत पर बने मण्डप ही इसे विशिष्ट रूप प्रदान करते हैं। यह मण्डप नीचे से वर्गाकार है और इनके शीर्ष पर, बाहर तथा भीतर से गरारीदार अर्धगोल गुम्बद हैं। यह मण्डप रूपमती के नाम से प्रसिद्ध हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि रूपमती अपने महल से निकट ही स्थित पवित्र नर्मदा के दर्शन करने के लिए प्रतिदिन यहाँ आया करती थी। मैदानों में निर्मल आकाश के नीचे, धूप में श्वेतसर्प की भाँति बलखाती हुई नर्मदा की धारा यहाँ से दिखाई देती है। मण्डपों की मेहराबें तथा स्तम्भ, निर्माण शैली की दृष्टि से रूपमती के समय से पहले बने माण्डू[1] के भवनों के अधिक अनुरूप हैं। इसलिए इनका निर्माण सम्भवतः रूपमती के समय से एक शताब्दी पूर्व हुआ। यहाँ से इस स्थल के रोमानी सौन्दर्य का आनन्द लेने के लिए सूर्यास्त के समय अथवा निर्मल चाँदनी रात में यहाँ आना चाहिये ऐसे में दर्शक निश्चय ही, अपने आप को भूतकाल में परियों के स्वप्नलोक में पायेगा। यह अनुभव दर्शक के लिए चिरस्मरणीय होगा।

## (५) सागर–तालाब तथा गाँव के मध्य स्थित भवन–समूह

### हाथी–महल

सड़क के पूर्व की ओर सागर झील तथा गाँव के मध्य में भवनों का छोटा सा समूह—हाथी–महल, कुछ मकबरे तथा एक सराय है।

[1]कक्ष की दीवार पर अन्दर की ओर दो अभिलेख अंकित हैं जिनको ठीक से पढ़ना सम्भव नहीं है। हाँ, लेखन शैली तथा सुपाठ्य शीर्षकों के आधार पर इनका उत्कीर्णन स्पष्टतया मालवा के सुल्तानों के काल में हुआ।

ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ स्थित एक भवन का नाम हाथी-महल, इसके ऊपर के ऊँचे गुम्बद के सहारे के लिए बनें, देखने में हाथी की टांगों जैसे अनुपातहीन विशाल स्तम्भों के कारण रखा गया । इस भवन की बनावट बारादरी की तरह है । इसमें हर तरफ तीन-तीन मेहराबदार द्वार हैं । यहाँ, बाहर की ओर, गुम्बद का ऊँचा अष्टकोणक आधार है, जोकि चिनाई में गढ़ी धारियों में विभाजित हैं । इसके कारण गुम्बद असामान्य रूप से ऊँचा हो गया है । इसके बर्हिभाग में बनी धारियों में अब भी अलंकृत टाइलों के कार्य के चिन्ह विद्यमान हैं । ऐसा प्रतीत होता है, कि मूलतः इस भवन का निर्माण विहार-स्थल (आराम-गाह) के रूप में हुआ परन्तु, बाद में इसे मकबरे का रूप दे दिया गया क्योंकि अब इसके भीतर एक कब्र बनी हुई है जिसके निकट ही एक मस्जिद भी निर्मित है । इस मस्जिद के कुछ अधिक समीप होने के कारण मकबरे का वाह्य वास्तुकलात्मक प्रभाव नष्ट हो गया है । इस मस्जिद का दोहरा कक्ष है जोकि ऊपर की मेहराबी छत के सहारे हेतु बने स्तम्भों द्वारा दस कक्षिकाओं में विभाजित है ।

## दरिया खाँ का मकबरा

ऊँचे चबूतरे पर खड़े इस भवन (फलक 8) के वाह्य भाग पर लाल रंग की चिनाई की हुई है जिस पर, किसी समय, रंगीन आकाचन से विभिन्न जटिल नमूने बनाये गए थे । मेहराबों के पायों (स्तम्भों) के निकट पारम्परिक ढंग के बने अष्टकोणीय स्तम्भ हैं । मध्य में स्थित मुख्य गुम्बद के आस-पास चारों कोनों पर बने छोटे-छोटे गुम्बद इस भवन की सर्वाधिक दिलचस्प विशेषता है । अपेक्षाकृत कम आकर्षक होते हुए भी ये गुम्बद होशंग शाह के मकबरे पर बने गुम्बदों की याद दिलाते हैं

इसका अभ्यन्तर एक वर्गाकार कक्ष है जिसके कोनों में ऊपर के गुम्बदों के सहारे हेतु मेहराबें निर्मित हैं । इसके भीतर केवल नीली टाइलों में बनी छोटी-छोटी मेहराबों की धारियाँ तथा वायु एवं प्रकाश के भीतर

प्रवेश हेतु दीवारों में बनी पत्थर की सुन्दर जाली में अलंकरण कार्य हुआ है ।

इसका मुख्य ताबूत दरिया खाँ को समर्पित है । दरिया खाँ, सुल्तान महमूद द्वितीय (1510-26 ई.) के राजदरबार में कर्मचारी था ।

इसके निकट कुछ जीर्ण-शीर्ण भवन भी हैं जिन्हें देखकर ऐसा लगता है कि उद्यान तथा अन्य विहार-स्थलों से युक्त यह प्रदेश काफी महत्वपूर्ण रहा होगा ।

## ( ६ ) विविध छुट-पुट स्मारक

### लाल-महल अथवा लाल-बंगला

पहाड़ी के पूर्वी सीमा प्रांत के निकट, जंगलों के बीच में लाल-महल अथवा रूबी-महल स्थित है । अब यह 'लाल-बंगला' नाम से प्रसिद्ध है । माण्डू के सुल्तान ग्रीष्म ऋतु में यहाँ रहा करते थे । यह महल तीन भागों में विभाजित था जिनमें से मध्य भाग का प्रयोग स्वागतार्थ तथा उसके दोनों तरफ के भागों का प्रयोग आवास हेतु होता था ।

मध्य भाग के सामने एक विस्तृत तथा खुला सेहन है । महल का यह भाग इस समय बहुत जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है । अब इसमें केवल एक विशाल चबूतरा तथा उस पर बनी बारादरी के अवशेष दिखाई देते हैं । परन्तु इसका पश्चिमी भाग इससे कुछ उत्तम प्रकार से परिरक्षित है । इसके सामने एक पृथक् परिबद्ध सेहन है । इसकी स्तम्भावली के पीछे गलियारे तथा दोनों सिरों पर बड़े-बड़े दोहरे कक्ष हैं । इस स्तम्भावली में सेहन की तरफ सात द्वार हैं । प्रत्येक द्वार में भवन को सादा वैभव प्रदान करते हुए चिनाई के कुछ अनलंकृत चौकोर स्तम्भों पर आधारित मेहराबों के सुन्दर समानुपातिक युग्म बने हुए हैं । पूर्वी भाग में तीन कक्ष हैं जिनके दोनों ओर कमरे बने हैं । इसके सामने एक लम्बा-चौड़ा चबूतरा है जिसके मध्य में एक कुण्ड है । महल के इस भाग में जल प्रपातों तथा नालियों के चिन्ह भी मिलते हैं जो इस बात के

प्रतीक हैं कि वर्ष के सर्वाधिक गर्मी के दिनों में इस भाग का प्रयोग निवास स्थान के रूप में होता था ।

## चिश्ती खाँ का महल

पहाड़ी के पूर्व की ओर प्रक्षेपित पर्वत-स्कन्ध के किनारे पर स्थित इस भवन से नीचे की घाटी का सुन्दर दृश्य दिखाई देता है । अत्यधिक क्षीणावस्था में होने के कारण इस भवन का नक्शा स्पष्ट रूप में नहीं प्रस्तुत किया जा सकता । ऐसा प्रतीत होता है कि इसके मूल नक्शे में, कक्षों तथा कमरों द्वारा परिबद्ध एक केन्द्रीय सेहन था जिसके चिन्ह अब भी इसके दक्षिण तथा उत्तर में दिखाई पड़ते हैं । दक्षिणी भाग कुछ उत्तम प्रकार से परिरक्षित है । इसके पूर्वी किनारे पर बने कमरों में से एक कमरे की दीवारों पर रंगीन आकाचन तथा चित्रकारी से इस भवन के मूल स्वरूप का कुछ-कुछ अनुमान होता है । इस तरफ बने एक मण्डप में से, नीचे भूमिगत कक्ष (तहखाने) तक सीढ़ियाँ जाती हैं ।

यह महल स्पष्टतया: वर्षा ऋतु के लिए आवास-स्थान के रूप में बनवाया गया था जबकि पहाड़ी-नदियों तथा जलप्रपातों से युक्त, हरी-भरी यह घाटी दृश्य की भव्यता में चार चाँद लगाती है ।

## छप्पन-महल

वास्तव में यह भवन किसी उमराव का मकबरा है परन्तु, संवत् 1956 में इसका जीर्णोद्धार किए जाने के कारण यह 'छप्पन-महल' के नाम से प्रसिद्ध है । यह महल 0.9 मीटर ऊँचे चबूतरे पर स्थित है । यह चबूतरा स्वयं भी भूमि से 3.9 मीटर ऊँचे बड़े चबूतरे पर बना होने के कारण महल को बहुत प्रभावशाली स्थिति प्रदान करता है । इस चबूतरे के नीचे तहखाने में दक्षिण की तरफ, स्पष्टतया:, तीर्थ-यात्रियों तथा दासों के प्रयोग हेतु बने मेहराबदार द्वारों वाले कक्ष निर्मित हैं । ऊपर भवन की दीवारों पर, ऊपर के छज्जे के सहारे के लिए बनी हिन्दू-शैली की सुन्दर दीवारगीरें तथा गलतेगोले दिखाई पड़ते हैं ।

इसका भीतरी भाग बेशक अल्पमात्रा में ही सही परन्तु, बहुत सुन्दर ढंग से गहरी नीली टाइलों से खचित ताखों की धारियों से अलंकृत है। ऊपर, गुम्बद के किनारे के साथ-साथ एक और सूक्ष्म उत्कीर्णन की पतली धारी है।

समग्रतः इस भवन में इसकी मेहराबों तथा गुम्बद के समानुपात में उत्तम विवेक तथा हिन्दूओं के अलंकरण-प्रेम ओर मुसलमानों की भवन निर्माण-संकल्पना की अत्यधिक सादगी में सुखद सम्मिश्रण का प्रदर्शन हुआ है और यही कारण है कि यह स्मारक सोलहवीं शताब्दी अर्थात् माण्डू की वास्तुकला के अन्तिम अवस्थान में निर्मित माना गया है।

अब यह भवन महामान्य महाराजा धार की निजी सम्पत्ति है और उनकी अनुमति से ही इसके दर्शन किये जा सकते हैं।

## नीलकंठ-महल

वर्तमान भवन स्पष्टतया:, नीलकण्ठ "शिव" के मन्दिर के स्थान पर बनाया गया था। इस भवन के मुस्लिम स्वरूप के बावजूद भी इस का नीलकंठ नाम पिछली तीन शताब्दियों तक चलता रहा। यह स्मारक अपने वास्तुकलात्मक गुणों की अपेक्षा नीचे की घाटी के शानदार दृश्य को प्रस्तुत करते हुए अपनी अत्यधिक मनोहर स्थिति के कारण अधिक आकर्षक लगता है।

इस महल में जाने के लिए नीचे सेहन के पश्चिमी प्रक्षेपण तक 61 सीढ़ियों की लम्बी पंक्ति बनी हुई है। सेहन का मुख्य भाग पूर्व-पश्चिम तथा दक्षिण की ओर से कक्षों द्वारा परिबद्ध है और उत्तर की ओर का भाग घाटी के दृश्य का आनन्द प्राप्त करने के लिए खुला रखा गया है। सेहन के मध्य में एक सुन्दर कुण्ड है जिसको दक्षिण की ओर स्थित कोठरी के साथ बनी नाली अथवा जल-प्रपात द्वारा जल पहुँचाया जाता था।

पूर्व तथा पश्चिम की ओर के कक्षों की छतें अर्ध-गुम्बदी हैं और

प्रत्येक कक्ष में प्रांगण की तरफ एक-एक मेहराबदार द्वार है । इन कक्षों का फर्श प्रांगण के फर्श से ऊँचा परन्तु दक्षिण की ओर निर्मित फर्श से नीचा है । दक्षिण की ओर के भीतरी कक्ष में एक अष्टकोणीय कुण्ड है । भवन के पीछे एक नाली तथा एक सुन्दर जल-प्रपात के चिन्ह मिले हैं जिनको देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह कुण्ड, ऊपर के पठार पर स्थित टंकी के जल से भरा जाता था । बाहर का कमरा स्पष्टतया:, महल का मुख्य कक्ष था क्योंकि यह, प्रांगण तथा इसके उधर स्थित घाटी से ऊँचा है । इसकी दीवारों पर अकबर के समय के कुछ अभिलेख दिखाई पड़ते हैं जिनमें सम्राट के दक्कन एवं खानदेश के अभियानों का उल्लेख किया गया है इन अभिलेखों में कुछ अन्य रोचक पद्य भी हैं जिनमें सांसारिक वैभव तथा समृद्धि की निरर्थकता का बड़े भावनात्मक ढंग से उल्लेख हुआ है ।

इनमें से दो पद्यों का अर्थ इस प्रकार किया जा सकता है :-

(1) तुम कब तक यह गर्व करते रहोगे कि तुम्हारा महल-स्वर्ग तक पहुँच गया है ? वे हमारे दंभी हृदय पर हसेंगे ।

इससे पहले कि वे हमारे इतिहास की ओर ध्यान दें आओ हम उनके इतिहास से चेतावनी ग्रहण करें (कुछ सीखें ) ।

(2) भोर के समय मैंने शिरवान शाह के बारजे में बैठे एक उल्लू को देखा । उसने बड़े दु:खपूर्ण स्वर में यह कहा, "कहाँ गई सब ठाट-बाट और कहाँ गई वह महिमा ।"

# परिशिष्ट

## माण्डू के इतिहास, काल व स्मारकों का संक्षिप्त विवरण

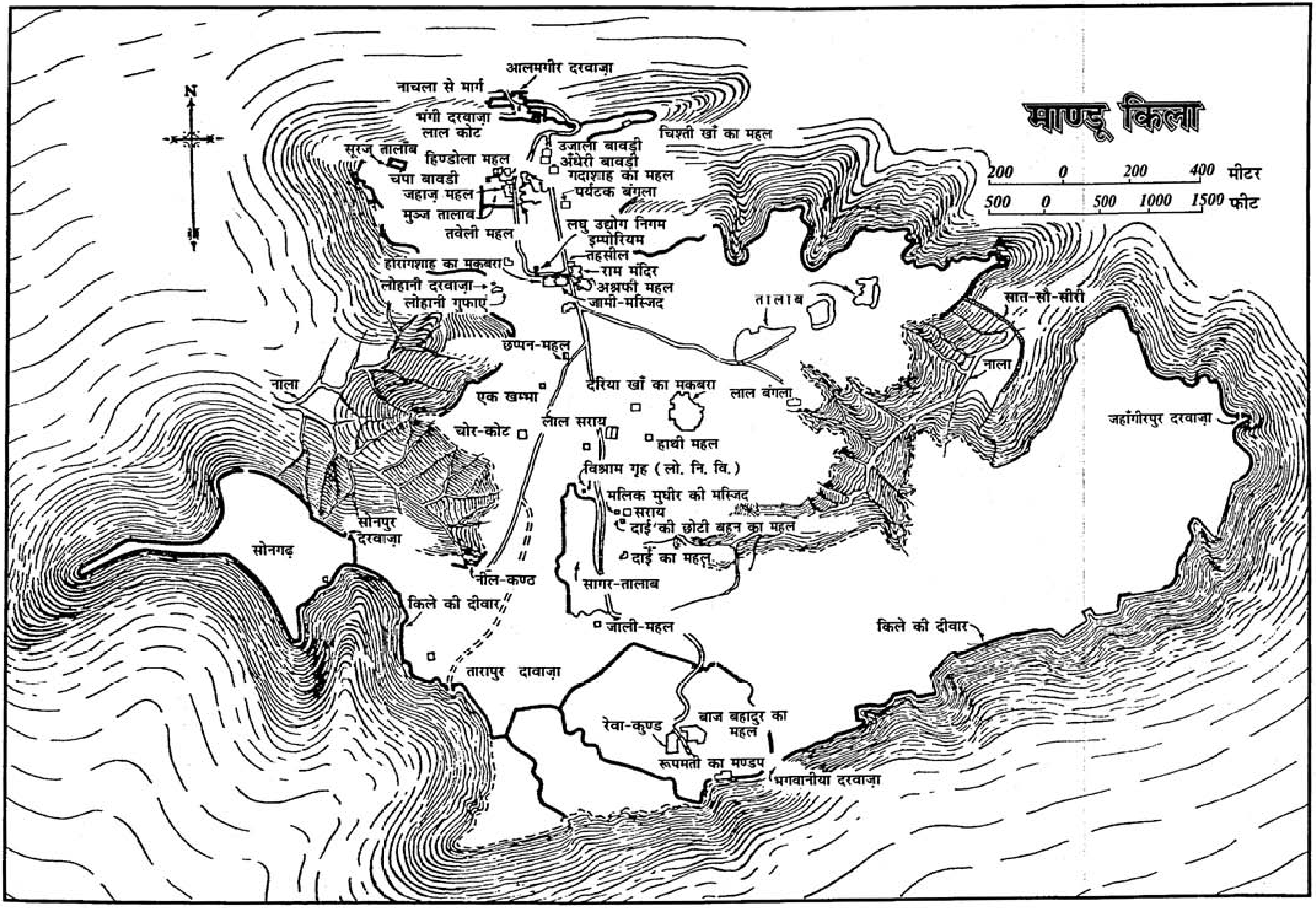
| तिथि | सत्तारूढ़ वंश अथवा सुल्तान | स्मारक |
|---|---|---|
| छठी शताब्दी से 950 ई. (लगभग) | परवर्ती गुप्तवंश, अंशतः कन्नौज का गुर्जर-प्रतिहार वंश तथा परमार सामन्त | शिलालेख व मूर्तियां |
| 905 ई. (लगभग) से 1305 ई. | मालवा का परमार वंश | इस समय, होशंगशाह के मकबरे के साथ संलग्न धर्मशाला के स्थानीय संग्रह में सुरक्षित उत्कीर्ण विखंड तथा अन्य पुरावशेष । |
| 1305 ई. से 1400 ई. | दिल्ली के सुल्तान | |
| 1401 ई. से 1405 ई. | दिलावर खाँ गौरी | दिलावर खाँ की मस्जिद और तारापुर दरवाजा । |
| 1405 ई. से 1435 ई. | होशंग शाह गौरी | दुर्ग प्राचीरें जामी-मस्जिद एवं होशंग शाह का मकबरा । |
| 1435 ई. से 1436 ई. | महमूद शाह गौरी | मलिक मुग़ीस की मस्जिद । |
| 1436 ई. से 1469 ई. | महमूद शाह खिलजी (प्रथम) | जामी-मस्जिद (निर्माण पूरा हुआ), विजय-स्तम्भ, महमूद खिलजी का मकबरा और मदरसा । |
| 1469 ई. से 1500 ई. | गयासुद्दीन खिलजी | जहाज़-महल तथा हिण्डोला-महल । |

| | | |
|---|---|---|
| 1500 ई. से 1510 ई. | नासिरूद्दीन खिलजी | रेवा-कुण्ड के समीप स्थित महल (जो अब बाज़ बहादुर का महल कहलाता है)। |
| 1510 ई. से 1526 ई. | महमूद शाह खिलजी (द्वितीय) | गदा शाह की दुकान और मकान तथा दरिया खाँ का मकबरा। |
| 1526 ई. से 1534 ई. | गुजरात का बहादुर शाह, हुमायूँ, कादिर शाह | |
| 1534 ई. से 1561 ई. | शेरशाह का सूबेदार शुजात खाँ<br>बाज़ बहादुर | बाज़ बहादुर का महल (केवल परिवर्द्धित अंश), रेवा-कुण्ड के स्मारक तथा 'रूपमती के मण्डप' नामक भवन में किया गया परिवर्द्धन। |
| 1561 ई. से 1732 ई. | मुगल वंश | नीलकंठ-महल, नाहर-झरोखा, हाथी-पोल, इत्यादि। |
| 1732 ई. और तत्पश्चात् | मराठा वंश (धार राज्य) | सोनगढ़ में स्थित मराठा गढ़ी। |

## संदर्भित ग्रन्थ-सूची


1. अरनेस्ट बर्नज, "धार एण्ड माण्डू, ए गाइड" (बम्बई, 1902).
2. "आर्केआलॉजिकल सर्वे रिपोर्टस, नार्थ वैस्ट प्राविन्सस एण्ड अवध सर्कल," 1892-93, पृष्ठ सं. 21-28
3. एल. एम. क्रम्प, "दी लेडी ऑफ द लोटस" (लण्डन, 1928).
4. जी. यजदानी, 'माण्डू : द इंसक्रिप्शन्स ऑफ धार एण्ड माण्डू', "एपिग्राफिया इण्डो-मोसलैमिका" में प्रकाशित, 1909-1910 और 1911-12.
5. जी. यजदानी, "माण्डू : द सिटी ऑफ जॉय" (आक्सफोर्ड, 1929).
6. डब्ल्यू हेग, "द कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया, III" अध्याय 14, "द किंगडम ऑफ मालवा' (कैम्ब्रिज, 1928)
7. पर्सी ब्राउन, "इण्डियन आर्किटैक्चर" (इस्लामिक पीरियड), (बम्बई, 1956).
8. फरिश्ता, "तारीख-ए-फरिश्ता", ब्रिग्ज् द्वारा अंग्रेजी अनुवाद, भाग-4 (कलकत्ता, 1910).
9. मेजर लुआर्ड, "धार एण्ड माण्डू : ए स्केच फार द साईट सीइंग" (इलाहाबाद, 1912).

[illegible] ई. से 1510 ई. [illegible] रैसा-कण्ड के समीप स्थित महल (जो अब


माण्डू किला
N
200 0 200 400 मीटर
500 0 500 1000 1500 फीट
आलमगीर दरवाज़ा
नाचला से मार्ग
भंगी दरवाज़ा
लाल कोट
चिश्ती खाँ का महल
सूरज तालाब
हिण्डोला महल
उजाला बावडी
अंधेरी बावडी
चंपा बावडी
गदाशाह का महल
जहाज़ महल
पर्यटक बंगला
मुञ्ज तालाब
तवेली महल
लघु उद्योग निगम
इम्पोरियम
तहसील
होशंगशाह का मकबरा
राम मंदिर
लोहानी दरवाज़ा
अश्रफी महल
लोहानी गुफाएं
जामी-मस्जिद
तालाब
सात-सौ-सीरी
छप्पन-महल
नाला
नाला
दरिया खाँ का मकबरा
एक खम्भा
लाल बंगला
चोर-कोट
लाल सराय
जहाँगीरपुर दरवाज़ा
हाथी महल
विश्राम गृह (लो. नि. वि.)
मलिक मुघीर की मस्जिद
सराय
सोनपुर दरवाज़ा
दाई की छोटी बहन का महल
सोनगढ़
दाई का महल
नील-कण्ठ
सागर-तालाब
किले की दीवार
जाली-महल
किले की दीवार
तारापुर दावाज़ा
रेवा-कुण्ड
बाज बहादुर का महल
रूपमती का मण्डप
भगवानीया दरवाज़ा


भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण